समाजोत्थापक क्रान्तिकारी युगपुरुष

ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद

लेखक :

डा० ज्योति प्रसाद जैन

प्रकाशक :

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद्

२०४, दरीबाकलाँ

दिल्ली-६

समाजोत्थापक क्रांतिकारी युगपुरुष
ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद

लेखक : "इतिहासमनीषी" डा० ज्योति प्रसाद जैन
"विद्यावारिधि"

ज्योति निकुञ्ज, चारबाग
लखनऊ- १९ (उ० प्र०)

प्रथमावृत्ति : १० फरवरी, १९८५ ई०
(पूज्य ब्रह्मचारी जी की ४२ वीं पुण्य तिथि)

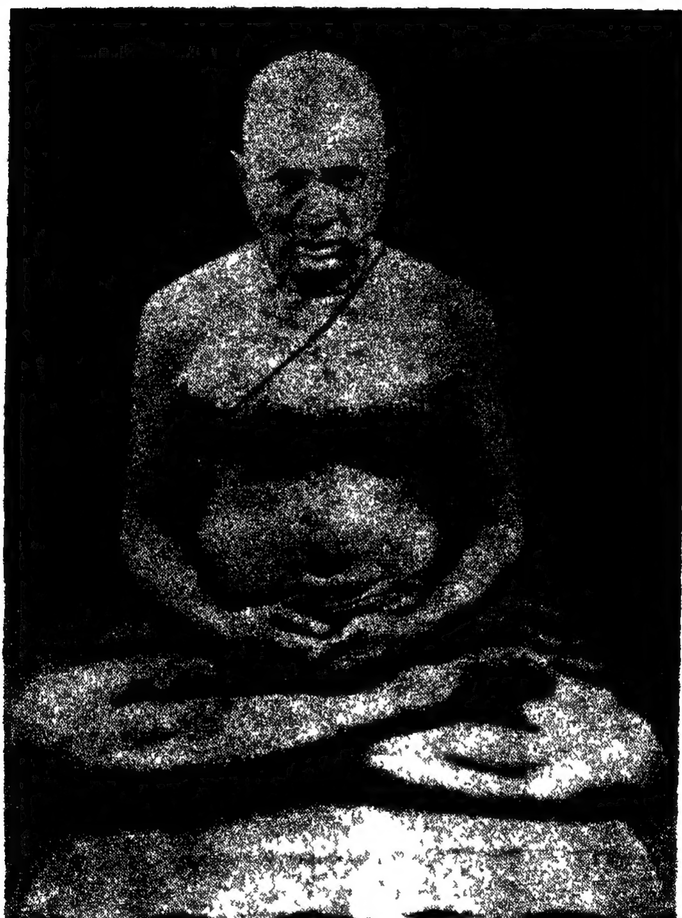
मूल्य : पाँच रुपये

प्रकाशक : अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद्
२०४ दरीबा कलाँ
दिल्ली-६

मुद्रक : आशीर्वाद प्रिन्टर्स
भावनालोक, रामपुरा सागर

समाजोन्नायक क्रांतिकारी युगपुरुष

ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद



जन्म : लखनऊ, सन् १८७८

स्वर्गवास : लखनऊ सन १९४२

विषय क्रम

प्रकाशकीय वक्तव्य

卐 श्री वीतरागाय नमः 卐

प्रसन्नता की बात है कि अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद के आद्य संस्थापक 'जैन धर्म भूषण' 'धर्म दिवाकर' श्रद्धेय पूज्य स्वर्गीय ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी की जन्म-शताब्दी समारोह की शुरूआत सन् १९७८ में परिषद के भिन्ड (म० प्र०) अधिवेशन के समय, जिस शालीनता के साथ हुई थी, उतनी ही शालीनता और भव्याकर्षक समारोह के साथ उनकी शताब्दी समापन समारोह का आयोजन भी गत वर्ष अक्टूबर सन् १९८२ में परिषद् के कानपुर अधिवेशन के पश्चात ही पूज्य ब्रह्मचारी जी की जन्म एवं बाद्य कर्म भूमि लखनऊ तथा उनकी समाधि स्थल जैन बाग, डालीगंज, लखनऊ (उ० प्र०) में सम्पन्न हुआ।

परिषद् के अध्यक्ष होने के नाते मुझे श्रद्धेय ब्रह्मचारी जी के सम्बन्ध में इस अवधि में उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व और उनके क्रिया कलापों के और भी सन्निकट आने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

शताब्दी-समापन-समारोह के स्वागताध्यक्ष इतिहास-मनीषी डा० ज्योतिप्रसाद जी जैन 'विद्या वारिधि' (लखनऊ उ० प्र०) थे, और मुख्य अतिथि के रूप में उनके समीप मंच पर मैं भी बैठा था। मैंने आदरणीय डा० सा० से अपनी भावाभिव्यक्ति स्पष्ट की पू० ब्रह्म० जी के जीवन पर कम से कम एक पुस्तक तो प्रकाशित होनी चाहिए और तुरन्त ही उन्होंने इस सम्बन्ध मे अपनी राय भी स्पष्ट की और बताया कि पू० ब्रह्म० जी सम्बन्धी पुस्तक की पाडुलिपि, जो उन्होंने

स्वयं लिखी है, तैयार है, और किन्हीं कारणोंवश वह प्रकाशित नहीं हो सकी- अतः यह सुनते ही उसके प्रकाशन के लिये वहीं पर मुझे स्वयं ही अतः प्रेरणा हुई और प्रकाशन के कार्य का भी श्री गणेश हुआ।

इस श्रृंखला के बीच जो मुझे अपना वक्तव्य प्रकाशित करना है, उसके लिये तो मेरे पास कुछ शब्द ही नहीं हैं। आदरणीय डा० सा० ने तो अपनी लेखनी द्वारा पू० ब्रह्म० जी की विद्वता, महानता और उनके सम्पूर्ण जीवन वृतान्त के संबंध में चार चांद लगा दिये हैं। फिर भी मैं अपने इस आख्यान में कुछ लिखने का प्रयास कर रहा हूं 'गुणा' सर्वत्र पूज्यते।' जैसा कि भगवान महावीर ने कहा है कि "व्यक्ति जन्म से नहीं कर्म से महान बनता है"। वही कहावत पू० ब्रह्म. जी के त्यागमय, तपस्वी जीवन को चरितार्थ करती हैं।

श्रद्धेय पूज्य ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी समाज सचेतक, समाज सुधारक, समाजोन्नायक, युग प्रवर्तक, क्रान्तिकारी, धर्म मर्मज्ञ, धर्मात्मा महापुरुष थे। वह एक सफल सम्पादक, लेखक, रचनाकार, टीकाकार तथा संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं के ज्ञाता एवं प्रतिभाशाली ओजस्वी वक्ता भी थे। उनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता यह कही जाना चाहिये कि वह समय के साथ चले, उनका जीवन, उनके कार्यकलाप, सभी समय के अनुरुप रहे और उसी के अनुरुप उन्होंने समाज के ढांचे को भी बदल डाला। समाज में व्याप्त रुढियों का उन्मूलन कर वह समाज में जागृति एवं क्रान्ति लाये।

धर्म के क्षेत्र में देश एवं विदेशों में भी अपनी बिलक्षण प्रतिभा के कारण उन्होंने महती धर्म प्रभावना की है, उनका जीवन वास्तव में 'बहुजन हिताय बहुजन सुखाय' की भावनाओं से ओतप्रोत था। वह सदैव बहुमान एव पदलिप्सा से दूर रहा करते थे।समाज के उत्पीड़न की उनके भीतर तड़प थी और समाज की प्रगति एवं समृद्धि की ओर व धार्मिक जागृति एवं प्रचार-प्रसार की उनमें ललक भी थी। उनकी चारित्रिक बिलक्षणता के प्रति जितना भी और जो कुछ भी लिखा जावे सूर्य को दर्पण दिखाने के सदृश्य ही कहा जावेगा।

इस प्रसंग में यहां पर एक बात और भी खास तौर पर दृष्टिगत करना चाहता हूं कि श्रद्धेय स्व० पू० ब्रह्म० शीतलप्रसाद जी ने बिक्रमी

१६ वीं शताब्दी के महान जैन आध्यात्मिक संत श्रीमद् जिन तारण स्वामी जी द्वारा रचित १४ आध्यात्मिक ग्रंथों में से ९ ग्रंथों की भाषा-टीका करके समाज के सामने जो एक महान आदर्श उपस्थित किया है और श्री दि० जैन तारण समाज पर जो एक महान उपकार किया है, उसके लिये हम और हमारी समाज सदैव उनके प्रति नतमस्तक रहेगी।

पू० ब्रह्म० जी के जीवन को यह उक्ति भी चरितार्थ करती है "हम तो अपना काम सब तमाम कर चले-अब तुम पता लगाते रहो कि हम कौन थे"। इन्हीं भावनाओं के साथ ही में अपने इस प्रकाशकीय वक्तव्य को समाप्त करता हुआ श्रध्देय पूज्य ब्रह्० जी के प्रति नतमस्तक हूं।

आशा है, सहधर्मी बन्धु एवं श्रद्धालु सज्जन वृन्द इस पुस्तक का अध्ययन कर पू० ब्रह० जी के दिव्य जीवन से एवं उनके महान जागरुक क्रिया कलापों से कुछ सबक ग्रहण कर अपने जीवन में कुछ जागृति प्रदान करेंगी, तभी इस पुस्तक का प्रकाशन और लेखक का श्रम सार्थक हो सकेगा।

अंत में मैं लेखक महोदय का भी अत्यन्त आभारी हूं, जिन्होने कि अपनी विद्वता एव विलक्षण सूझबूझ तथा प्रतिभा के कारण अपनी रचना को रुचिकर एवं ग्राह्य बनाया है और संकलित व संग्रह की हुई साहित्य सामग्री के द्वारा पू० ब्रह्मचारी जी के समग्र जीवन-दर्शन व क्रिया कलापों को एक पुस्तक के रूप में समाज के सामने प्रस्तुत किया है, जिससे कि वर्तमान के साथ साथ भावी पीढ़ी को भी श्रध्देय पू० ब्र० जी के दिव्य जीवन से शिक्षा एवं कार्य करने की प्रबल प्रेरणा भी भी मिलती रहे।

ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद की जय।

श्रद्धावनत्

डालचन्द जैन (पूर्व विधायक)

(अध्यक्ष, अ० भा० दि० जैन परिषद)

सागर (म० प्र०)

प्राक्कथन

"जैनधर्म भूषण" "धर्म दिवाकर" स्व. ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद जी वर्तमान शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जैन समाज की एक विशिष्ट महत्वपूर्ण चिरस्मरणीय विभूति रहे। वह धर्मात्मा, धर्मज्ञ, शास्त्र मर्मज्ञ, टीकाकार एवं व्याख्याता, साहित्यकार, लेखक, पत्रकार, कुशलवक्ता, उत्साही धर्मप्रचारक एवं उत्कट समाज सुधारक थे। अपने ६४ वर्ष के जीवन में लगभग ४७ वर्ष उन्होंने समाज सेवा में व्यतीत किये एवं किशोरावस्था के शिक्षा दीक्षा में व्यतीत कर प्रारंभिक १७ वर्ष के उपरान्त लगभग दस वर्ष वह एक समाजचेता एवं समाजसेवी सद्गृहस्थ रहे, तदन्तर ४–५ वर्ष उन्होंने समाज की समस्याओं पर चिन्तन करने एवं अनुभव प्राप्त करने हेतु भ्रमण में बिताए और शेष लगभग ३२ वर्ष उन्होंने एक व्रती संयमी ब्रह्मचारी परिव्राजक के रूप में धर्म, संस्कृति एवं समाज की सेवा में पूर्णतया समर्पित भाव से व्यतीत किये। उन्होंने अनेक स्पृहणीय उपलब्धियां प्राप्त कीं, सफलताएँ भी मिलीं, कुछ विफलताएँ भी, तथापि एक सार्थक जीवन बिताया। इस विषय में अतिशयोक्ति नहीं है कि उसी युग में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने जिस प्रकार सम्पूर्ण देश में राष्ट्रीय चेतना जागृत करके तथा स्वतंत्रता संग्राम छेड़कर सत्य एवं अहिंसा के मार्ग से देश को अन्तत: स्वतंत्र करा दिया, उसी प्रकार स्व. ब्रह्मचारी जी ने जैन समाज में अभूतपूर्व जागृति उत्पन्न करके उसे प्रगतिशील बनाने में यथाशक्य योग दिया।

किन्तु, कृतघ्न समाज ने अपने उपकर्त्ता को प्राय: विस्मृत कर दिया। १९७८ में उनकी जन्मशती थी और १९८२ में उनके अवसान को भी ४० वर्ष बीत चुके थे। उनके निधन के पश्चात उनकी स्मृति बनाए रखने के लिए अनेक योजनाएँ बनी, जिनमें से एक भी पूरी न हो सकी। भारत वर्षीय दि० जैन परिषद के तत्कालीन महामन्त्री स्व. ला. राजेन्द्रकुमार जैन ने "वीर" का "शीतल अंक" १९४४ में प्रकाशित किया था, जो कि १२० पृष्ठ का सचित्र, अति भव्य एवं तथ्यपूर्ण विशेषांक था। १९५१ में ब्रह्मचारी जी के सहयोगी बा. अजित प्रसाद वकील ने सेन्ट्रल जैन पब्लिशिंग हाउस से "ब्रह्मचारी शीतल" नाम से से ब्रह्मचारी जी की १४२ पृष्ठीय जीवन गाथा प्रकाशित की थी।

भारतीय ज्ञानपीठ ने १९५२ में श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय की पुस्तक "जैन-जागरण के अग्रदूत" प्रकाशित की, जिसमें सर्वप्रथम चरित्र ब्रह्मचारी जी का ही है – उनके सम्बन्ध में स्वयं गोयलीय जी का भावपूर्ण संस्मरण पठनीय है। स्व० साहू शान्ति प्रसाद जी के उदार आश्वासन के बावजूद लखनऊ में शीतल छात्रावास निर्माण करने की योजना फलवती न हो पाई। श्री मूलचन्द किसनदास कापड़िया ने ब्र. जी की स्मृति में एक पुस्तकमाला चालू की थी परन्तु वह भी ३-४ वर्ष से अधिक नहीं चल पाई। सन् १९६९ में परिषद् परीक्षा बोर्ड के स्व. बा. उग्रसेन जी ने ब्र. जी की जन्म शताब्दी मनाने की योजना बनाई। जब उन्होंने मुझसे चर्चा की तो मैंने कहा कि जन्म शताब्दी तो १९७८ में होगी, किन्तु वह अभियान और उत्साह में इतने बढ़ चुके थे कि उन्हों ने कहा, न सही जन्म शताब्दी ९१ वीं जयन्ति ही मनायेंगे। अतएव रविवार २ नवम्बर, १९६९ को स्व० श्रीमती लेखवती जैन, उपाध्यक्ष विधान परिषद, हरियाणा की अध्यक्षता में ब्रह्मचारी जी के समाधि-स्थल, जैनबाग – डालीगंज, लखनऊ में उक्त समारोह मनाया गया। इस अवसर पर लखनऊ जैन धर्म प्रवर्द्धनी सभा की ओर से सुरेशचन्द्र जैन लिखित "ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी" शीर्षक से एक २४ पृष्ठीय पुस्तिका भी प्रकाशित की गई और उनकी समाधि के चबूतरे के जीर्णोद्धार की योजना भी बनी जो इधर तीन-चार वर्ष पूर्व ही पूरी हो पाई। १९-७७ में ही हमने ब्रह्मचारी जी की जन्मशताब्दी मनाने की चर्चा छेड़ दी थी, जिसे परिषद के १९७८ के भिण्ड अधिवेशन में मूर्तरूप देने की घोषणा की गई। तबसे परिषद के तीन वार्षिक अधिवेशन हो चुके हैं और प्रत्येक में ब्रह्मचारी जी के नाम पर कुछ चर्चा, भाषण आदि होते रहे, "वीर" में हमने तथा अन्य कई सज्जनों ने उनके संबंध में लेखादि भी प्रकाशित किए, किन्तु केवल जबानी जमाखर्च होकर रह गया। कोई ठोस कार्य इस दिशा में नहीं हुआ। सन् १९७८ में ही हमसे ब्रह्म-चारी जी के जीवन पर एक पुस्तक तैयार करने के लिए आग्रह किया गया था और हमने पुस्तक तैयार करके "वीर" के संपादक श्री राजेन्द्र कुमार जैन को मेरठ भेज दी थी, किन्तु चार वर्ष तक वह पुस्तिका अप्रकाशित ही पड़ी रही। १९७८ में लखनऊ में भारतीय जैन मिलन के वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर भी ब्र० जी की जन्म शताब्दी का लिया-दिया आयोजन किया गया और लखनऊ जैन मिलन द्वारा एक "मिलन शीतल स्मारिका" भी प्रकाशित की गई थी।

अब जब २५ अक्टूबर, १९८२ को कानपुर में आयोजित भारतीय दिगम्बर जैन परिषद के वार्षिक अधिवेशन के सिलसिले में लखनऊ में स्व० श्री ब्रह्म० शीतल प्रसाद जन्म शताब्दी समापन समारोह मनाया गया। यह समारोह जैन धर्म प्रवर्धनी सभा लखनऊ के तत्वावधान में मनाया गया। परिषद के अध्यक्ष श्रीमन्त सेठ डालचन्द जी जैन मुख्य अतिथि थे, हमने स्वागताध्यक्ष के रूप में सभा की अध्यक्षता की। कानपुर अधिवेशन पहिले दिन ही समाप्त हो गया था, अतएव वहाँ देश के विभिन्न स्थानों से समागत परिषद के नेताओं, कार्यकर्ताओं, परिषद प्रेमियों और ब्रह्मचारी जी के भक्तों में से अधिकांश ने उक्त अवसर पर लखनऊ पधारकर उक्त समापन समारोह में सोत्साह भाग लिया. ब्रह्मचारी जी के प्रेरणाप्रद कृतित्व पर प्रकाश डाला तथा उनके उठाए हुए कार्यक्रमों को चलाते रहने पर बल दिया। मंच पर मेरे बराबर ही श्री डालचन्द जी विराजमान थे। उन्होंने कहा कि ब्रह्मचारी जी के जीवन पर कम से कम एक पुस्तक तो प्रकाशित होनी ही चाहिए। हमने उन्हें पुस्तक की कहानी सुनायी तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ तुरत श्री राजेन्द्रकुमार जी से पूछा तो उन्होंने कहा कि हाँ पुस्तक की पाडुलिपि तो पड़ी है, किन्तु अर्थाभाव आदि कतिपय कारणों से वह अभी तक प्रकाशित नहीं हो सकी। अध्यक्ष जी ने कहा कि उसकी २००० प्रतियाँ तत्काल छपवालें और जो व्यय लगे उनसे मगा ले।

राजेन्द्र कुमार जी के यह कहने पर कि शायद डाक्टर साहब उसे एक बार देखना पसंद करें अतः हम दोनों की सहमति हुई और अन्ततः १० जनवरी, १९८३ को वह पांडुलिपि हमें प्राप्त हुई। उसे देखकर तथा पर्याप्त संशोधन-संवर्धन करके इस पुस्तक के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। श्री डालचन्द जी का उत्साह इसी से स्पष्ट है कि उक्त समापन समारोह के पश्चात कई पत्र उन्होंने श्री राजेन्द्र कुमार जी को पुस्तक हमारे पास भेजने के लिये तथा हमें उसकी प्रेस कापी तैयार करके सीधे उनके पास सागर भेज देने के लिए लिखे।

श्रीमन्त सेठ डालचन्द जैन, सागर (म० प्र०) के सुप्रसिद्ध "बालक बीड़ी" प्रतिष्ठान मेसर्स भगवानदास शोभालाल जैन के मेनेजिंग डायरेक्टर तथा दानवीर श्रीमन्त समाज भूषण सेठ भगवानदास जी के ज्येष्ठ

हुआ है। ६५ वर्षीय, अनुभवी प्रौढ़ श्री डालचन्द जी न केवल कुशल व्यापारी हैं, वरन् एक प्रमुख राष्ट्रनेता, समाजनेता, कर्तव्यनिष्ठ राज-नीतिज्ञ एवं सेवाभावी सज्जनरत्न हैं। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती पुष्पावती सुप्रसिद्ध समाजसेवी न्यायाधीश स्व० श्री जमुना प्रसाद कलरैया की सुपुत्री हैं और अपने पति की सुशील धर्मपत्नी एवं सद्गृहिणी हैं। श्री डालचन्द जी यद्यपि मूलतः तारण-तरण (समैया) समाज के नर रत्न हैं, वह सर्व प्रकार के जाति व्यामोह, पंथ मूढ़ता या साम्प्रदायिक पक्षपात से बहुत ऊपर हैं। वस्तुतः उनकी जनसेवा का क्षेत्र इतना व्यापक, विस्तृत एवं विविध रहता आया है कि उसे किसी एक दायरे में सीमित नहीं किया जा सकता। किशोरावस्था से ही उनमें राष्ट्रीय चेतना विकसित हुई, गांधीवादी विचारधारा से वे बहुत प्रभावित रहे, १९४२ के "भारत छोड़ो आन्दोलन" में सक्रिय भाग लिया और जेल यात्रा भी की। इस प्रकार स्वतन्त्रता सेनानियों में भी वह परिगणित हुए। तदनन्तर अपने नगर, क्षेत्र एवं प्रान्त की कांग्रेसी राजनीति में सक्रिय रहे, छः वर्ष (१९६३-६८) वह सागर की नगर पालिका परिषद के अध्यक्ष रहे और सात्विक दस वर्ष (१९६७-७७) मध्यप्रदेश विधान सभा में कांग्रेसी विधायक रहे। पचासों सरकारी एवं गैर सरकारी राजनीतिक व्यापारी, सांस्कृतिक, शैक्षणिक एवं सामाजिक संस्थाओं तथा संगठनों के वह सक्रिय सदस्य, ट्रस्टी एवं पदाधिकारी रहते आये हैं। बिना किसी साम्प्रदायिक या जातीय भेदभाव के जैन समाज की तो स्थानीय ही नहीं कई अखिल भारतीय संस्थाओं से भी वह सम्बद्ध रहते आये हैं। गत पांच वर्षों से वह दिगम्बर जैन परिषद के मनोनीत अध्यक्ष हैं। उनके अध्यक्ष काल में भिंड (१९७८), इन्दौर (१९८०) और कानपुर (१९८२) जैसे परिषद के अति विशाल एवं प्रभावक वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुए, जिनकी सफलता का बहुत कुछ श्रेय श्री डालचन्द जी के उत्साह, कर्मठता, विलक्षणता, मधुर व्यवहार एवं सूझबूझ को है। उनके हृदय में समाजोत्थान की तड़प है और इस हेतु वह सदैव तत्पर व प्रयत्नशील रहते हैं। अब यह बात दूसरी है कि उपयुक्त सहयोगियों एवं समर्पित समाजसेवी कार्यकर्ताओं की अत्यन्त विरलता तथा परिषद की अर्थाभाव आदि कुछ बुनियादी कमजोरियों के कारण वह जितना कुछ कर सकते हैं, या करना चाहते हैं, कर नहीं पा रहे हैं। तथापि इस विषय में संदेह नहीं कि श्री डालचन्द जी की गणना वर्तमान दिगम्बर जैन समाज के सर्वोपरि नेताओं एवं हितैषियों में है। स्व० ब्रह्मचारी

शीतल प्रसाद जी ने जब पूज्य तारण स्वामी के साहित्य को देखा था और उनकी टीकाएं लिखने एवं उन्हें प्रकाशित करने का कार्य उठाया था तथा सामान्यत: तारण-तरण समाज में नवजागृति एवं प्राण संचार किया था, तब डालचन्द जी की शैशवावस्था ही थी। किन्तु उनका पूरा परिवार तभी से ब्रह्मचारी जी का भक्त हो गया। होश सम्हालने पर डालचन्द जी में भी वे संस्कार आये और वह ब्रह्मचारी जी के प्रति बड़ी श्रद्धा एवं आदर का भाव रखते आये हैं। अतएव प्रस्तुत पुस्तिका के प्रकाशन में उन्होंने जो अभूतपूर्व रुचि ली और तत्परता के साथ इसका उत्तम प्रकाशन कराया वह उनके उपयुक्त ही था – उसके लिए उन्हें कौन और क्या धन्यवाद दें ?

इस पुस्तिका में ब्रह्मचारी जी के संबंध में जो ज्ञातव्य हमें अपने स्वयं के संपर्कों द्वारा, उनकी उपलब्ध रचनाओं के अवलोकन के द्वारा बा० अजित प्रसाद जी की पुस्तक "ब्रह्म. शीतल" ला. राजेन्द्रकुमार जी द्वारा सुसंपादित "वीर" के "शीतल अंक" श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय की पुस्तक 'जैन जागरण के अग्रदूत" (१६५२) श्री सुरेशचन्द्र जी की पुस्तिका "ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद जी" लखनऊ जैन मिलन की "मिलन शीतल स्मारिका" पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित ब्रह्मचारी जी विषयक लेखों आदि से प्राप्त हुए, उन सबका यथायोग्य उपयोग किया गया है। हम उन सबके, लेखकों आदि के आभारी हैं। पुस्तक में अनेक त्रुटियां भी हो सकती हैं, उनका उत्तरदायित्व हमारा है। पुस्तक के लेखन व प्रेस कापी आदि तैयार करने में अनुज अजित प्रसाद जैन (महामन्त्री-तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ० प्र०) पुत्र रमाकांत जैन, पौत्र नलिनकान्त जैन तथा अनिलकुमार अग्रवाल का भी यथावश्यक सहायता सहयोग मिला है।

क्योंकि ब्रह्मचारी जी विषयक पूर्वोक्त पुस्तकें, विशेषांक आदि अब प्राय: सब अप्राप्य हैं, इस पुस्तिका की उपयोगिता एवं आवश्यकता स्वयं सिद्ध है। आशा है कि पूज्य ब्रह्मचारी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की स्मृतियों को सुरक्षित रखने में, उनके तथा उनके साहित्य पर आगे कार्य करने के लिये और उनके आदर्शों से प्रेरणा लेने में यह तुच्छ प्रयास किसी सीमा तक सफल होगा इसी से इस पुस्तक की सार्थकता है।

ज्योति प्रसाद जैन

'ज्योति निकुन्ज' चार बाग लखनऊ-१६
दि० १० फरवरी १६८३ ई०

धर्म और समाज के उन्नायक

सन् १८५७ के स्वातन्त्र्य समर और १९४७ में स्वतन्त्रता प्राप्ति के मध्य ९० वर्ष का काल भारत वर्ष के लिये एक अद्भुत जागृति सर्वव्यापी विकास एवं प्रगति का युग रहा है। इस काल में जीवन से सम्बन्धित विभिन्न क्षेत्रों में होने वाले आन्दोलनों, अभियानों क्रांतियों एवं परिवर्तनों ने देश और समाज की कायापलट कर दी और उन्हें प्राचीन युग से निकालकर आधुनिक युग में स्थापित कर दिया। जैन समाज अखिल भारतीय राष्ट्र एवं जनता का अभिन्न अंग रहा है, और है, तथापि अपनी कतिपय सांस्कृतिक एवं सामाजिक विशेषताओं के कारण उसने उक्त समष्टि के मध्य अपना निजी व्यक्तित्व भी अक्षुण बनाये रखा है। देश व्यापी राष्ट्रीय चेतना और विचार क्रांतियों से वह अछूता नहीं रह सकता था, रहा भी नहीं। किन्तु उसके धार्मिक एवं सामाजिक जीवन में उक्त विचार क्रान्तियों के प्रभाव एवं प्रतिक्रियाएं उसकी स्वयं की संस्कृति और संगठन के अनुरूप हुई। इस समाज व्यापी जागृति एवं उन्नयन के प्रस्तोता, पुरस्कर्त्ता, समर्थक एवं कार्यकर्त्ता भी इसी समाज में से उत्पन्न हुए और आगे आए। इस तदयुगीन जैन जागृति के अग्रदूतों की प्रथम पीढ़ी तो कभी की समाप्त हो गई, दूसरी भी प्राय: समाप्त ही है, तीसरी पीढ़ी के कुछ इने-गिने सज्जन अभी विद्यमान हैं, किन्तु उनमें अब पहले जैसा उत्साह रहा और न वैसी कार्यक्षमता।

"जैन-धर्म-भूषण", "धर्मदिवाकर" संत प्रवर ब्र० शीतलप्रसाद जी आधुनिक युग में जैन जाति को जगाने और उठाने वाले कर्मठ नेताओं की दूसरी पीढ़ी के प्राण थे, और वह प्रथम पीढ़ी तथा तीसरी पीढ़ी के बीच की सम्भवतया सर्वाधिक महत्वपूर्ण कड़ी थे उसी प्रकार वह पुरातन पंथियों या स्थितिपालकों और प्रगतिशील आधुनिकतावादी या सुधारकों के बीच, पंडितवर्ग एवं बाबूवर्ग के बीच तथा साधुवर्ग एव श्रावक वर्ग के बीच भी एक सुदृढ़ कड़ी का कार्य करते थे।

सन १८७८ (सं० १९३५) के कातिक मास में (संभवतया कृष्ण पक्ष की अष्टमी के दिन) लखनऊ नगर में उसका जन्म हुआ था। अठारह वर्ष

की आयु में ही वह सामाजिक क्षेत्र में उतर पड़े, जब उनका एक उद्बोधक लेख जैन गजट में प्रकाशित हुआ। २७ वर्ष की आयु में घर और गृहस्थी का परित्याग कर दिया और ३२ वर्ष की आयु होते वह एक सच्चे जैन परिव्राजक बन गए। इस समय तक जैन नेताओं की प्रथम पीढ़ी चल रही थी। ब्रह्मचारी जी ने उनके सानिध्य में आकर समाज सेवा की एप्रेन्टिसी की और अपनी उत्कट लगन, अथक परिश्रम एवं निस्वार्थ सेवाभाव के कारण उन्होंने शीघ्र ही उक्त नेताओं का स्थान ले लिया। अगले ३० वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचारी जी सामाजिक प्रगति के प्राय: सभी क्षेत्रों पर छाए रहे। आबाल वृद्ध, स्त्री-पुरुष शिक्षित-अशिक्षित, सभी को उन्होंने प्रभावित किया। उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त से लेकर कन्याकुमारी ही नहीं, श्रीलंका पर्यन्त, और महाराष्ट्र-गुजरात से लेकर उड़ीसा-बंगाल और आसाम ही नहीं, बर्मा पर्यन्त उन्होंने भ्रमण किया। चातुर्मास के चार महिने ही वह किसी एक स्थान में व्यतीत करते थे शेष ८ महिने निरन्तर स्थान-स्थान का भ्रमण करते रहते थे। कन्या विक्रय वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह, बहु विवाह, सामाजिक बहिष्कार आदि कुरीतियो का निवारण, अन्तर्जातीय विवाह एव विधवा-विवाह का समर्थन, बालकों, युवकों, प्रौढ़ों एवं स्त्रियों की शिक्षा का प्रचार, छात्रावास, पुस्तकालय, वाचनालय, बालाविश्राम, वनिताश्रम आदि संस्थाओं की स्थान-स्थान में स्थापना में प्रेरणा एवं योगदान, (सराकों जैसे पिछड़े) उपवर्गों अथवा गौणता को प्राप्त समुदायो को नवजीवन प्रदान करना, खादी का प्रचार एव जैन जनों में राष्ट्रीयता के विचारों का पोषण पत्र पत्रिकाओं का संपादन, अनगिनत लेखों और लगभग एक सौ छोटी-बड़ी पुस्तकों की रचना, अनेक सम्पादकों, लेखको एव समाजसेवी कार्यकर्ताओं को प्रेरणा और उत्साह प्रदान करके कार्यक्षेत्र में लाना ब्रह्मचारी जी के जीवन क्रम के अभिन्न अंग थे। ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, स्याद्वाद महाविद्यालय जैसी कई संस्थाओं के अधिष्ठाता के रूप में संचालन किया। जैन पुरातत्व की शोध खोज भी की। एक जैन विश्वविद्यालय की स्थापना भी उनका एक स्वप्न था। अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद् के तो वह मूल संस्थापक थे, और उसके मुखपत्र "वीर" के आद्य संपादक थे। वह स्वय तो शुद्ध खादी का प्रयोग करते ही थे, नगर-नगर, गांव-गांव में स्त्री-पुरुषों को अपने लिये तथा जिन मन्दिरों में भी खादी के प्रयोग की प्रेरणा देते थे।

अखिल भारतीय कांग्रेस के प्रायः सभी वार्षिक अधिवेशनों में वह उपस्थित रहे। जहां जाते, वह प्रयत्न करते कि सार्वजनिक सभाओं में उनके व्याख्यान हों, जिससे अजैन जनता भी उनका लाभ उठा सके। उनके व्याख्यानों में साम्प्रदायिकता की गन्ध नहीं होती थी। जनता के जीवन को धार्मिक एवं नैतिक बनाने पर, उसे सादा, सरल, सत्य एवं अहिंसा प्रतिष्ठित और स्वदेशप्रेम से ओत—प्रोत बनाने पर वह ही अधिक बल देते थे।

ब्रह्मचारी जी देह-भोगों से विरक्त, गृहत्यागी व्रती थे। पारिभाषिक दृष्टि से भले ही वह मुनि या साधु नहीं कहलाए। किन्तु जनसाधारण उन्हें एक अच्छा जैन साधु मानकर ही उनका आदर एवं भक्ति करता था। वह भी अपने पद के लिए शास्त्रविहित चर्या एवं नियम संयम का पूरी दृढ़ता के साथ पालन करते थे। जिन धर्म एवं जिनवाणी पर उनकी पूर्ण आस्था थी, किन्तु उन्होंने कभी भी किसी अन्य धर्म, पंथ या सम्प्रदाय की अवमानना नहीं की। सर्व-धर्म समभाव के पोषण के लिए जैनेत्तर धर्मों का भी उन्होंने तुलनात्मक अध्ययन किया। गुणियों के प्रति उनका असीम अनुराग था। स्व० गुरु गोपालदास जी बरैया का वह बड़ा आदर करते थे। स्थितिपालकों ने अनेक बार उनका प्रबल विरोध किया, उनके कार्य में अनेक बाधाएं डाली, धमकियां दी, किन्तु ब्रह्मचारी जी को वे क्षुब्ध न कर सके, उनके समभाव को विचलित न कर सके।

ब्रह्मचारी जी को मान—सम्मान की चाह छू भी नहीं पाई थी। सामाजिक अभिनन्दनों, मानपत्रों उपाधियों आदि से वह सदैव बचते थे। अपने लिए उन्होंने कभी किसी से कोई चाह या मांग नहीं की, न अपने किसी कुटुम्बी या रिश्तेदार के लिए ही, प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में भी। अपने नाम से कभी कोई संस्था स्थापित नहीं की, कहीं कहीं समाज ने चाहा भी, किन्तु उन्होंने ऐसा होने ही नहीं दिया। समाज के उस समय के प्रायः सभी श्रीमानों से ब्रह्मचारी जी का सम्पर्क रहा, किन्तु उनमें से किसी को भी कभी कोई खुशामद या चापलूसी नहीं की उनकी प्रशंस्तियां नहीं गायीं, उनके प्रभाव में आकर अपने विचारों में परिवर्तन भी नहीं किया, तथापि उनका सहज आदर प्राप्त किया। बम्बई के दानवीर सेठ माणिकचन्द जे० पी० तो उनके परम भक्त

थे ही, सर सेठ हुकमचन्द, सेठ लालचन्द सेठी प्रभृति अन्य अनेक श्रीमन्त भी उनके प्रति परम आदर भाव रखते थे।

समाज का जैसा दर्द, उनकी सर्वतोमुखी उन्नति के लिए जैसी तड़प, धर्म एवं समाज के प्रचार का जैसा उत्कट मिशनरी उत्साह ब्रह्मचारी जी के हृदय में था, ये चीजें किसी अन्य धर्म या समाजसेवी सज्जन में कदाचित दीख पड़ी हो, फिर भी उस मात्रा में नहीं। भारत के विभिन्न भागों के अतिरिक्त बर्मा देश और श्रीलंका तक तो वह गए ही, यूरोप और अमेरिका जाने की भी उनकी इच्छा थी। वह कार्यक्रम बनते बनते रह गया। ब्रह्मचारी जी की क्षमताएं स्वाभावतः सीमित थीं तथापि उत्साह और लगन में कोई कमी नहीं थी। बैरिस्टर जगमंदर लाल जैनी एवं बैरिस्टर चम्पतराय जैन को इंग्लैंड आदि में जाकर धर्म प्रचार करने में सर्वाधिक प्रबल प्रेरक ब्रह्मचारी जी ही थे।

समाज और संस्कृति के निःस्वार्थ सेवकों का निर्माता भी सम्भवतः ब्रह्मचारी जी जैसा उस युग में दूसरा नही हुआ। सेठ माणिक चन्द्र के कार्यों में तो वह सतत् प्रेरक एवं सहयोगी रहे ही जगमंदर लाल जैनी, चम्पतराय जी, कुमार देवेन्द्र प्रसाद, पंडिता मगनबेन, अजित प्रसाद वकील, कामता प्रसाद जैन, मूलचन्द किसनदास कापड़िया प्रभृति अनेकों महानुभावों को इस सेवा में रत करने का और उनसे कार्य कराने का प्रमुख श्रेय ब्रह्मचारी जी को ही है। स्वयं हम उनके साक्षात् संपर्क में अपनी किशोरावस्था में ही आ गए थे। सन् १९३२ में जब हम आगरा में पढ़ते थे, तो ब्रह्मचारी जी की ही प्रेरणा से हमने एक लेख लिखा था, जिसे उन्होंने लेकर स्वयं जैनमित्र में प्रकाशित करने के लिये भेजा था। जैन पत्रों में मुद्रित-प्रकाशित वही हमारा सर्वप्रथम लेख था। अनेक बार दर्शन हुए और प्रेरणा प्राप्त की। सन् १९४१ में जब हम लखनऊ आ गए तो ब्रह्मचारी जी रुग्णावस्था में यहीं अजिताश्रम में रहकर उपचार करा रहे थे। उनके १० फरवरी १९४२ में निधन पर्यन्त इस बीच उनके पास बहुधा मिलना-बैठना होता रहा। जीवन के अंतिम मासों में रोगजनित भीषण परिषहों को वह किस साहस, धैर्य और सहनशीलता के साथ सहन कर रहे थे, वह वर्णनातीत है।

जैनों में, अजैनों में, स्वदेश में, विदेश में जैनत्व की झलक भरने का प्रयत्न करना उस समाजोद्धारक एवं धर्म प्रचारक संत की स्वासों का मधुर संगीत बन गया था।

वे पंडितों में पंडित थे और बालकों में विद्यार्थी। उदारता और कट्टरता का उनमें विलक्षण समन्वय था। आटा हाथ का पिसा हो, मर्यादा के अन्दर हो, जल छना हुआ तथा शुद्ध हो, दाता गृहस्थ की जैन धर्म में निशंकित श्रद्धा हो, वहीं उनका आहार होता था। उनका आहार विहार शास्त्रोक्त था। साथ ही उनका दृष्टि कोण उदार था। सुधारकों में अग्रतम सुधारक थे। कुरीतियों और लोकमूढ़ताओं के लिए तो वे प्रलयंकारी ज्वाला थे। जैन जाति की उन्नति के लिए उनका हृदय तड़पता था।

वह असाधारण जैन मिशनरी थे, अजैन विद्वानों के सामने एक सच्चे जैन मिशनरी की स्प्रिट से जा पहुँचते थे। आज पंजाब विश्वविद्यालय के वॉइस चांसलर प्रोफेसर वुलर को प्रभावित कर विश्वविद्यालय में जैन दर्शन प्रचार की जड़ जमाई जा रही है तो कल राधास्वामियों के " साहब जी" को जैन दर्शन की खूबियां समझाने दयाल बाग पहुंच रहे हैं।

अनेक शिक्षितअजैनों को प्रभावित करके जन धर्म का श्रद्धालु बनाया यथा पंडित मूलचन्द्र तिवारी, ठाकुर प्यारेलाल आदि।

तत्वार्थ सूत्र और द्रव्य संग्रह को जैनोंकी बाइबिल कहते थे और उनके पठन-पाठन का छात्रों में अधिकाधिक प्रचार करते थे।

राष्ट्रीय भावना और देश भक्ति से इतने ओतप्रोत थे कि जैन समाज को उद्‌बोधन दिया "अपने को भारतीय समझो। कांग्रेस का साथ दो। भारत की दशा दयाजनक है। देश सेवा धर्म है, कठिन व्रत है। यह एक ऐसा यज्ञ है जिसमें अपने को होम देना होता है।" (जैनमित्र ५—१२—४०)। वह जैन पोलिटिकल कान्फ्रेंस के जन्मदाताओं में से थे,जिसके द्वारा वह जैनों व राष्ट्रीय नेताओं में सम्पर्क स्थापित करना चाहते थे। प्रचड स्वतन्त्र संग्राम सेनानी पं० अर्जुन लाल जी सेठी की नजरबन्दी के विरोध मे चलाये गये आन्दोलन का उन्होंने जोरदार नेतृत्व किया।

भीषण विरोधों के बावजूद, वह अपनी ही राह पर चले। देह ममत्व के त्यागी, अध्यात्म पथ के पथिक एवं मन्दकषायी होते हुए भीउन्हें सदैव समाज हित की चिन्ता और धर्म प्रचार की बेचैनी रहती थी।

एक विशाल अखिल विश्व जैन संघ की संयोजना उनका एक प्रिय स्वप्न था, जिसके लिए वह सदैव प्रयत्नशील रहे। उसी प्रकार एक जैन विश्वविद्यालय की स्थापना भी उनका एक स्वप्न था।

व्यक्ति का मूल्य उसके समकालीन लोग बहुत कम समझ पाते हैं। आने वाली पीढ़ियां ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उसका उचित मूल्यांकन करने में कहीं अधिक समर्थ होती हैं। किन्तु बहुधा हम अपने वर्तमान में इतने अधिक व्यस्त हो जाते हैं कि अतीत के उपकारी महापुरुषों को विस्मृत करते जाते है, और इस प्रकार प्रेरणा के प्रबल स्त्रोतों को भुलाते चले जाते हैं। यह स्थिति समाज की प्रगति के लिए बड़ी अहितकर है। अन्य अनेक इतिहास-पुरुषों की भाँति हमने अपने धर्म और समाज के महान उन्नायक एवं सतत निश्छल सेवी स्व० ब्र० शीतलप्रसाद जी को भी प्रायः भुला दिया। आवश्यकता है कि हम उनके जीवन एवँ कार्य-कलापों का स्मरण करके उनसे प्रेरणा लें और अपनी प्रगति का मार्ग प्रशस्त करें।

साधु चन्दन बावना शीतल जाका अंग।
तपन बुझावे और की, वे दे अपना रंग॥

ऐसे ही परोपकारी थे हमारे ब्रह्मचारी जी। विश्वविश्रुत विज्ञानवेत्ता एवँ दार्शनिक अलबर्ट आइन्स्टीन के शब्दों में—'Only a life lived for others is a life worthwhile' :—
दूसरों के लिये जिया गया जीवन ही वस्तुतः सार्थक जीवन है।

जीवन-परिचय

वि० सं० १९३५ की कार्तिक कृष्ण अष्टमी (नवम्बर १८७८ ई०) के दिन लखनऊ नगर के मोहल्ला सराय-मआली-खां की कालामहल नामक पुरानी हवेली में श्रीमती नारायणी देवी की कुक्षि से उनका जन्म हुआ था। पिता का नाम मक्खनलाल था और पितामह का मंगलसेन था, जो संस्कृत फारसी एवं महाजनी हिसाब में निपुण थे तथा गोम्मटसार, समयसार आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय के प्रेमी थे। वह लखनऊ के साहुजी की फर्म की कलकत्ता शाखा के खजांची नियुक्त होकर वहीं रहने लगे थे और बांसतल्ला के दिगम्बर जैन मंदिर की धर्मगोष्ठी के शीघ्र ही प्राण बन गये थे। पौत्र शीतलप्रसाद आठ वर्ष के ही थे, जब मंगलसेन जी इन्हें अपने साथ कलकत्ता लिवा ले गऐ। पितामह से उन्हें धार्मिक संस्कार तथा प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त हुआ। कलकत्ता में ही १५ वर्ष की आयु में इनका विवाह छेदीलाल गुप्त की कन्या के साथ कर दिया गया। नववधु वैष्णव संस्कारों में पली थी, किंतु इनके संसर्ग में वह शीघ्र ही श्रद्धालु जैन श्राविका बन गई और विद्या अभ्यास भी किया। सन १८९६ में शीतलप्रसाद ने कलकत्ता में ही मैट्रीकुलेशन परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और वह सपत्नीक लखनऊ वापस आ गये उसी वर्ष २४ मई १८९६ के जैन गजट में उनका एक जोशीला समाज-उद्‌बोधक लेख प्रकाशित हुआ।

आजीवका के साधन के रूप में उन्होंने लखनऊ की घोष कम्पनी में एकाउन्टेन्ट की नौकरी कर ली और १९०१ में रुड़की इंजीनिरिंग कालेज से एकाउन्टेन्ट का प्रमाण पत्र प्राप्त करके अवध-रुहेलखण्ड रेलवे के लेखा विभाग में नियुक्त हो गऐ। नौकरी के कार्य से जितना समय शेष बचता था वह धर्मशास्त्रों के अध्ययन तथा समाज सेवा के कार्य में लगाते थे। दशलक्षण पर्व में चौक, लखनऊ के बड़े मंदिर में नित्य मध्यान्ह तीन-तीन घन्टे तक शास्त्र प्रवचन करते थे। वह बच्चों और स्त्रियों की शिक्षा पर बल देते थे। स्थानीय जैन धर्म प्रवर्धनी सभा के वह प्राण थे, और अवध प्रान्तीय दि० जैन सभा की स्थापना करके उसके उपमन्त्री हुए। सन् १९०० में भा०दि० जैन महा सभा के मथुरा अधिवेशन में तथा १९०१ में नजीबाबाद में आयोजित

उसके नैमित्तिक अधिवेशन में लखनऊ के बा० अजित प्रसाद वकील प्रभृति अपने कई सहयोगियों सहित सम्मिलित हुऐ और समाज सुधार विषयक कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास कराये सन् १६०२ से १६०८ तक वह भा० दि० जैन सभा तथा जैन यंगमेन्स एसोसिएेशन (कालान्तर में भारत जैन महामंडल) के सयुक्त पाक्षिक पत्र जैन गजट के प्रबन्धक एवं कार्यकारी सपादक रहे-१६०५ में उसे उन्होंने साप्ताहिक कर दिया और १६०८ में पंडित जुगलकिशोर जी मुख्तार को उसे सौंपकर उससे छुट्टी ली।

इस बीच सन् १६०३ में पिता मक्खनलाल का और मार्च १६०४ में एक सप्ताह के भीतर ही माता, धर्मपत्नि तथा अनुज पन्नालाल का देहान्त हो गया। इन असह्य वियोगों ने ससार की क्षणभंगुरता उन्हें प्रत्यक्ष कर दी, और वह गृहस्थ से विरक्त एवं उदासीन हो गये, तथा अपना प्रायः सारा उपयोग धर्म एवं समाज की सेवा में लगाने लगे। १६०५ में तो उन्होंने रेलवे की सर्विस से भी त्यागपत्र दे दिया। कुछ मास पूर्व ही वह बम्बई की महिला रत्न मगनबेन तथा उनके समाजचेता पिता सेठ माणिकचन्द्र जे०पी० के सपर्क में आ गये थे, अत: अब वह बाहर अधिक जाने-आने लगे। उसी वर्ष अम्बाला में हुऐ दि० जैन महासभा, पंजाब प्रांतिक दि० जैन सभा और जैन यंगमेन्स एसोसियन के संयुक्त अधिवेशन में भाग लिया फलस्वरूप जनवरी १६०५ के अंग्रेजी जैन गजट में बैरिस्टर जे० एल० जैनी ने जैन धर्म का अथक परिश्रमी सेवक" कहकर इनकी सेवाओं की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उसी वर्ष उन्होंने वाराणसी में सेठ माणिकचन्द्र के सभापतित्व में स्याद्वाद विद्यालय की स्थापना में प्रमुख योग दिया और जीवन भर उक्त संस्था की उन्नति में सहायक रहे, कई वर्ष उसके अधिष्ठाता भी रहे। तदनन्तर वह बम्बई में सेठ जी के पास ही रहने लगे।

१३ सितम्बर सन् १६०६ को शोलापुर में ऐल्लक पन्नालाल जी के केश-लोंच के अवसर पर पहुँचकर शीतलप्रसाद जी ने उनसे ब्रह्मचर्य प्रतिमा ग्रहण की, और अब वह सच्चे गृहत्यागी, व्रती-श्रावक, गेरुआ वस्त्रधारी जैन परिव्राजक हो गए तथा उनका शेष जीवन जैन धर्म, संस्कृति, समाज एवं देश की सेवा में पूर्णतया समर्पित हो गया। जैन धर्म और समाज की सर्वतोमुखी उन्नति के प्रयत्न में उन्होंने अपने जीवन का एक एक क्षण लगा दिया।

१९११ के १९३४ तक [illegible] उन्होंने मुलतान, जयपुर, वाराणसी, बम्बई, इन्दौर, कारंजा, बड़ौदा, [illegible], दिल्ली, लखनऊ, कलकत्ता, पानीपत, इटावा, बड़ौत, खंडवा, रोहतक, उस्मानाबाद, अमरोहा, मुरादाबाद सागर, इटारसी, अमरावती, हिसार, दाहोद आदि विभिन्न स्थानों में चातुर्मास किए। वह प्रत्येक चातुर्मास में भाषण, शास्त्र प्रवचन, धर्म प्रचार, शिक्षाप्रचार समाजसुधार आदि कार्यक्रमों के अतिरिक्त एक या दो पुस्तकें भी लिख लेते थे। अनेक स्थानों में उन्होंने उपयोगी संस्थाओं की स्थापना कराई। वह अपना नाम किसी संस्था के साथ सम्बद्ध नहीं करते थे और ख्याति, नाम उपाधियों से बचते थे। तथापि १९१३ में बाराणसी में पं० गोपालदास जी बरैया की अध्यक्षता और डा० हर्मन जैकोबी की उपस्थिति में उनका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया, और १९२४ में इटावा में "धर्मदिवाकर" की उपाधि प्रदान की गई।

भारतवर्षीय दि० जैन परिषद, संयुक्त प्रान्तीय दि० जैन सभा, बंगीय सर्वधर्म परिषद्, सनातन जैन समाज आदि अनेकों महत्वपूर्ण सामाजिक संगठनों की स्थापना में ब्रह्मचारी जी अग्रणी, सहायक वा प्रेरक रहे। स्याद्वाद विद्यालय, बाराणसी एवं ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम, हस्तिनापुर के अतिरिक्त अनेक स्थानों में पाठशालाएं, विद्यालय, छात्रावास, बालाविश्राम, पुस्तकालयों आदि की स्थापना उन्होंने कराई। वह स्वयं शुद्ध खादी का प्रयोग करते थे और जैन समाज में सर्वत्र उसका प्रचार करते थे। राष्ट्रीय कांग्रेस के प्राय: प्रत्येक अधिवेशन में वह उपस्थित रहे और जैनों का प्रतिनिधित्व किया। लगभग ५ वर्ष "जैनगजट" का लगभग १५ वर्ष "जैनमित्र" का और प्रारंभ में कई वर्ष "वीर" का उन्होंने संपादन किया और अपने अनगिनत लेखों के द्वारा समाज को जाग्रत करने तथा उसमें नव प्राण फूंकने में वह सचेष्ट रहे। अनेक लेखकों, साहित्यकारों, पत्रकारों, समाज-सेवियों आदि को प्रेरणा एवं सहयोग देकर तैयार करने का उन्हें श्रेय है। कई विस्मृत तीर्थों का उन्होंने उद्धार किया और विभिन्न प्रान्तों के जैन पुरातत्व का सर्वेक्षण या अध्ययन करके उसे उजागर किया। वह निरन्तर भ्रमण करते रहते थे, और सम्पूर्ण भारत की ही नहीं, बल्कि लंका व बर्मा की भी यात्रा की। उनके हृदय में जैन धर्म के प्रचार, जैनसंस्कृति की प्रभावना और जैन समाज की सर्वतोन्मुखी उन्नति के लिए अद्भुत तड़फ थी। फलस्वरूप वर्तमान शताब्दी के प्रथम चार दशकों में ब्रह्मचारी

शीतल प्रसाद जी पूरे जैन समाज पर छाए रहे। किसी ने उनकी स्वामी समंत भद्र से तुलना की, किसी ने उन्हें अपने युग का सर्वोपरि जैन मिशनरी कहा। समाज उनके ऋण से कभी उऋण नहीं हो सकता। जीवन के अंतिम दो वर्षों में कम्प-रोग से पीड़ित होकर वह, लखनऊ में ही रहे। रोगजन्य असह्य पीड़ा वेदना व परिषहों को समभाव से सहते रहे और अंत में १० फरवरी, १९४२ को प्रात : ४ बजे उनका शरीर पूरा हो गया। क्षणभंगुर देह नहीं रही, किन्तु उनका कृतित्व, उनका यश : शरीर अमर है।

बकौल अकबर इलाहाबादी :—

हंस के दुनिया में मरा कोई, कोई रोके मरा।
जिन्दगी पाई मगर उसने, जो कुछ हो के मरा।।

जो उठा मरने से वह, जिसकी खुदा पर थी नजर।
जिसने दुनिया ही को पाया था, वह सब खो के मरा।।

था लगा रूह पे गफलत से दुई का धब्बा।
था वही सूफियेसाफी जो उसे धो के मरा।।

वंशानुक्रम

यों तो ब्रह्मचारी जी विश्वमानव थे, राष्ट्रीय दृष्टि से भारतीय और धार्मिक दृष्टि से जैन थे। इससे अधिक छोटे दायरे में उन्हें सीमित रखना उचित नहीं लगता। तथापि, जब उनका जीवन परिचय दिया गया है, तो उनके वंशक्रम का भी उपलब्ध परिचय दे देना असंगत नहीं होगा। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व उत्तरप्रदेश के लखनऊ नगर में गोयल गोत्रीय अग्रवाल-वैश्य जातीय एवं दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी श्री पृथ्वीदास नामक सज्जन रहते थे। उनके दो पुत्र थे, रामचन्द्र तथा रामसुखदास। रामचन्द्र के पुत्र मंगलसेन थे और उनके पुत्र मक्खन लाल थे, जिनके चार पुत्र संतूमल, अतूमल, शीतलप्रसाद, और पन्नालाल तथा एक पुत्री राधाबीबी थी। इनमें से संतूमल के पुत्र धर्मचन्द्र और सुमेरचन्द्र चिकनवाले थे। धर्मचन्द्र के दत्तक पुत्र महावीर प्रसाद हैं और सुमेरचन्द्र के पुत्र वीरचन्द्र व दीपचन्द्र हैं। राधाबीबी के पुत्र बरातीलाल बर्तनवाले थे, जिनके पुत्र इन्दरचन्द्र बर्तनवाले, गोपालदास आदि हैं। पृथ्वीदास के द्वितीय पुत्र रामसुखदास के पुत्र मामराज थे, उनके बिहारीलाल और विशेश्वरनाथ थे जो कानपुर में जा बसे। उनके पुत्र मूलचन्द्र थे, जिनके पुत्र कपूरचन्द करांची वाले वाले थे। उनके पुत्र धूपचन्द्र थे और धूपचन्द्र के रविचन्द्र हैं, जो अपने पितामह एवं पिता की भाँति ही ब्रह्मचारी जी के परमभक्त, परिषद के प्रेमी और कानपुर के उत्साही समाजसेवी हैं। ब्रह्मचारी जी के भानजे ला० बराती लाल की भाँति उनके पुत्र इन्दरचन्द्र भी परिषद प्रेमी एवं अच्छे समाज सेवी हैं। ब्रह्मचारी जी के अग्रज ला० सन्तूमल अच्छे धार्मिक कवि थे, "खुशरंग उपनाम" से रचना करते थे। उनका "खुशरंग विलास" बहुत असी हुआ, तब छपा था। उनके पुत्र धर्मचन्द्र अच्छे पंडित थे, और सुमेरचन्द्र भी धार्मिक रचनाएँ करते थे।

वास्तव में तो व्यक्ति अपने स्वयं के कृतित्व से ही आदर का पात्र होता है, जैसा कि किसी शायर ने कहा है :—

मैं पूंछता नहीं, तुम्हारा नाम है, क्या।
न यह कि नाम बुजुर्गों का और मुकाम है क्या॥
तुम्हारे काम गर अच्छे, तो नाम अच्छे हैं।
घराने अच्छे, घर अच्छे, तमाम अच्छे हैं॥

ब्रह्मचारी जी की दिनचर्या

प्रातः ४.३०	शय्या त्याग
४.३० से ६.१५	पुस्तकादि लेखन
६.३०–७.३०	प्रातः सामायिक
७.३०–८.३०	नित्यकर्म-स्नानादि
८.३०–१०.३०	जिन मंदिर में देवदर्शन, शास्त्र प्रवचन एवं अपना नित्य पाठ।
१०.३० बजे	भोजन, जिस श्रावक के घर आमंत्रित होते वहाँ शुद्ध सात्विक भोजन ग्रहण करते। तदनन्तर उस घर के सब सदस्यों को एकत्रित करके वहाँ उपदेश देते तथा प्रत्येक को कोई न कोई नियम दिलाते।
११.३० से १२.००	विश्राम
१२.००–१.००	मध्यान्ह सामायिक
१.००–६.००	पत्रों के उत्तर, लेखन कार्य, जिज्ञासुओं की शंकाओं का समाधान, स्थानीय संस्थाओं आदि के विषय में चर्चा।
६.००–७.३०	सायंकालीन सामायिक
८.००–९.३०	जिनमंदिर में सभा करके प्रवचन, व्याख्यान, धार्मिक एवं सामाजिक विषयों पर। रविवार को, कभी-कभी अन्य दिनों में भी व्यवस्था होने पर सार्वजनिक स्थान में आयोजित आम सभा में जैन धर्म, दर्शन व संस्कृति पर सार्वजनिक भाषण।

१०.०० बजे रात्रि से – शयन

सामान्य दिनों में सामान्यतः प्रायः यही उनकी दिनचर्या रहती थी। रेल आदि में यात्रा के कारण ही उसमें कुछ व्यवधान पड़ता था। वह अपने समय का पूरा उपयोग करते थे, एक भी क्षण व्यर्थ नहीं खोते थे।

पथ-चिन्ह

युगपुरुष पू० ब्रह्मचारी जी के जीवन के प्रेरणाप्रद पथचिन्ह जो काल के बालुका पथ पर छोड़ गये :—

१८७८ ई० - कार्तिक कृष्ण अष्टमी, वि० सं० १६३५ में जन्म, लखनऊ नगर के मौहल्ला सराय मालीखां की "कालामहल" नामक हवेली में माता नारायणी देवी की कुक्षी से, पिता श्री मक्खनलाल, पितामह श्री मंगलसैन, दिगम्बर जैन, गोयल गोत्रीय अग्रवाल।

१८८५— पितामह के पास कलकत्ता गए, वहीं प्रारंभिक शिक्षा और धार्मिक संस्कार प्राप्त किए।

१८८८ — लखनऊ में जैन धर्म प्रवर्द्धनी सभा की स्थापना, जिसके वह प्रारम से ही सक्रिय सदस्य रहे।

१८६३ — कलकत्ता में श्री छेदीलाल गुप्त की पुत्री के साथ विवाह।

१८६६ — कलकत्ता में प्रथम श्रेणी मे मेट्रीकुलेशन परीक्षा पास की। प्रथम लेख प्रकाशित हुआ जैन—गजट में, समाज के उद्बोधन रूप में। कलकत्ता से लखनऊ वापिस लौट आये। दिगम्बर जैन महासभा के सदस्य बने।

१६००—१३ अक्टूबर महासभा की प्रबन्धकारिणी समिति के सदस्य के रूप में उसके मथुरा अधिवेशन में सम्मिलित हुए।

१६०१ — एकाउन्टेन्ट परीक्षा में उत्तीर्ण। अवध रुहेलखण्ड रेलवे में नियुक्ति। जैन धर्म प्रवर्द्धनी सभा लखनऊ तथा अवध प्रान्तीय जैन सभा के उपमंत्री निर्वाचित। बा० अजित प्रसाद जैन से संपर्क प्रारभ। धर्म ग्रन्थों के स्वाध्याय की रुचि और समाज सेवा की प्रवृत्ति वृद्धिगत।

१६०२—दि० जैन महासभा का मुखपत्र "जैनगजट" इनके प्रबन्ध में लखनऊ से मुद्रित होने लगा।

१६०३—पिता श्री मक्खनलाल जी का देहान्त।

१६०४— माता नारायनी देवी (६ मार्च), धर्मपत्नि (१३ मार्च) अनुज पन्नालाल (१५ मार्च) का देहान्त — एक सप्ताह के भीतर ही तीन निकटतम आत्मीयों की दुख:द मृत्यु ने चित्त में संसार—देह—भोगों से विरक्ति का बीज बो दिया। स्वाध्याय, शास्त्र प्रवचन और समाज सेवा में अधिक समय व्यतीत होने लगा। बा० अजित प्रसाद वकील से निकट संपर्क प्रारभ। महिलारत्न मगनबेन के लखनऊ आगमन पर उनसे भेंट एव सम्पकरिम्भ। अम्बाला में महासभा, पंजाब प्रान्तीय जैन सभा तथा जैन यगमेन्स एसोसियेशन के संयुक्त अधिवेशन में उत्साही एवं कर्मठ सहयोग के

कारण बैरिस्टर जगमन्दर लाल जैनी द्वारा "जैन धर्म का अथक परिश्रमी सेवक" शब्दों से प्रशसित हुए। तब से यही जीवन कामूलमंत्र बन गया।

१९०५ – वाराणसी में वृहद् जैन सम्मेलन, जिसमें स्याद्वाद महाविद्यालय की स्थापना हुई। इस समारोह में इनकी विशेष सक्रिय भूमिका रही। वहीं बंबई के दानवीर सेठ माणकचन्द्र जी जे० पी० के सम्पर्क में आए और संबंध बढ़ते गए। सेठ जी के आग्रह पर १९ अगस्त को रेलवे नौकरी से त्यागपत्र देकर उनके पास बंबई चले गए और धर्म एवं समाज सेवा के कार्य में एकनिष्ठ होकर जुट गए। अनेक स्थानों की यात्रा भी की। सेठ जी और उनकी सुपुत्री मगनबेन इनसे स्नेही आत्मीयवत व्यवहार करते थे।

१९०९ – "जैनमित्र" के सम्पादक मनोनीत हुए और लगभग बीस वर्ष पर्यन्त बने रहे। उस पत्र को अभूतपूर्व महत्व और स्थायित्व प्रदान किया। इसी वर्ष बड़े भाई ला० अन्नूमल का देहान्त हुआ।

१९१० – १३ सितम्बर के दिन शोलापुर में ऐल्लक पन्नालाल जी के समक्ष ब्रह्मचर्य प्रतिमा धारण की और तभी से ब्रह्मचारी शीतल प्रसाद के नाम से प्रसिद्ध हुए – स्वयं वह अपने हस्ताक्षर "ब्रह्मचारी शीतल" के रूप में करते थे। दीक्षा के अवसर पर उनके ओजस्वी भाषण से प्रेरित होकर उपस्थित जनता ने ३० ००० रू० दानार्थ एकत्र कर लिए।

१९११ – उड़ीसा यात्रा, पुरातात्विक खोज, विभिन्न प्रान्तों के जैन स्मारकों को प्रकाश में लाने का कार्यारम्भ। मुलतान (सिंध) में चातुर्मास। श्वेताम्बर साहित्य का विशेषाध्ययन। "तत्वमाला" और "गृहस्थ धर्म" पुस्तकों का लेखन-प्रकाशन। जैनतत्व प्रकाशिनी सभा इटावा के मानद सदस्य।

१९१२ – जयपुर चातुर्मास. कुन्दकुन्दाचार्य के नियमसारादि ग्रंथों का गहन अध्ययन सामायिक का प्रचार, "अनुभवानंद" पुस्तक का प्रकाशन। कुलुहापहाड़ की यात्रा और उस तीर्थ के उद्धार का प्रयत्न।

१९१३ – वाराणसी चातुर्मास, स्याद्वाद महाविद्यालय के अधिवेशन के अवसर पर डा० हर्मन जेकोबी, महामहोपाध्याय डा० सतीश चन्द्र विद्याभूषण प्रभृति अनेक प्रकांड विद्वानों की उपस्थिति में "जैनधर्म भूषण" की उपाधि से सम्मानित। एक वर्ष के लिए नियम लिया कि जिस दिन शास्त्रों का कुछ न कुछ अनुवाद न कर लूंगा, आहार नहीं लूंगा।

६१४ – बंबई चातुर्मास, नियमसार का भाषानुवाद एवं टीका लिखी। इसी वर्ष इनके परम हितैषी सेठ माणिकचन्द्र जी का स्वर्गवास (१३ जुलाई) को हुआ।

१९१५ – इन्दौर चातुर्मास, समयसार की टीका लिखी। बैरिस्टर जे० एल० जैनी, जज इन्दौर, को तत्वार्थ सूत्र, पंचास्तिकाय और गोम्मटसार-जीवकांड के अंग्रेजी अनुवाद में प्रेरणा एवं सहयोग।

१९१६ – कारंजा चातुर्मास, भट्टारक वीरसेन स्वामी के संसर्ग से आध्यात्मिक अध्ययन-प्रवचन में अभिरूचि विशेष वृद्धिगत, "आत्मधर्म" पुस्तक की रचना।

१९१७ – इन्दौर चातुर्मास, जज जे० एल० जैनी को गोम्मटसार–कर्मकांड (भाग १) व समयसार के अंग्रेजी अनुवाद में सहायता दी।

१९१८ – बड़ौदा चातुर्मास, "दानवीर सेठ मणिकचन्द्र" ग्रंथ का लेखन। रथोत्सव व अढ़ाईद्वीप विधान बड़ौदा में कराया।

१९१९ – बागीदौरा चातुर्मास, बांसवाड़ा जैन संस्कृत विद्यालय की स्थापना कराई और उसके लिए २७०००/- रू० का दान कराया।

१९२० – दिल्ली चातुर्मास, व्यापारिक जैन विद्यालय की स्थापना कराई, "समाधिशतक" की टीका लिखी। जूनागढ़ के आनंद धर्मालय में "आधुनिक काल में मनुष्य कर्त्तव्य" पर भाषण (२९-१-२०), गौहाटी (आसाम) में असिस्टेन्ट कमिश्नर की अध्यक्षता में अंग्रेजी में भाषण दिया (८-४-२०)।

१९२१ – लखनऊ चातुर्मास, "इष्टोपदेश" की टीका लिखी, ब्रह्मचारिणी पार्वती बाई के माध्यम से महिला समाज में जागृति कराई। उत्साही सहयोगी कुमार देवेन्द्र प्रसाद का निधन।

१९२२ - कलकत्ता चातुर्मास; दशलक्षण पर्व में लोगों को व्याख्यान देने का नियम कराया। प्रवचनसार टीका की रचना। अहिच्छत्र में संयुक्त प्रान्तीय दि० जैन समाज के अधिवेशन की सफलता में सर्वोपरि योग; समाज सुधार संबन्धी कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास कराए आन्दोलन शुरु किये। एक-एक, दो-दो मास के अन्तर से कानपुर, इलाहाबाद आदि स्थानों में भी उस सभा के नैमित्तिक अधिवेशन कराए। इसी वर्ष वाराणसी में पंडित पन्नालाल बाकलीवाल आदि सेवगीय सर्वधर्म परिषद की स्थापना कराई, इन्डियन ऐसोसिऐशन फागलो शिमला में अंग्रेजी में भाषण दिया (२१-५-२२)

१९२३ - दिल्ली के जिन बिम्ब प्रतिष्ठा महोत्सव के अवसर पर अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद की स्थापना कराने में सर्व-प्रमुख योग। पानीपत चातुर्मास, "प्रवचनसार" की 'ज्ञेयतत्व-टीका (द्वि० भाग) लिखी, परिषद के मुखपत्र 'वीर" के संपादक हुए। सी० एस० मिलन आई० सी० एस० की अध्यक्षता में अंग्रेजी में भाषण दिया। (२०-३-२३)

१९२४ - इटावा चातुर्मास, "धर्म दिवाकर" की पदवी से विभूषित, इटावा की विनयसागर नसिया का जीर्णोद्वार कराया, प्रवचनसार-टीका (तृ० भाग) लिखी। इटावा में जैन विद्यालय, कन्या पाठशाला व प्राणीरक्षा सभा की स्थापना कराई।

१९२५ - बड़ौत चातुर्मास, दि० जैन हाई स्कूल के लिए रू० १० ०००/- का दान कराया, पंचास्तिकाय-टीका (प्र० भाग) लिखी। करहल में हुए संयुक्त प्रान्तीय दि० जैन सभा के अधिवेशन में अध्यक्ष पद से उद्बोधक भाषण दिया, जिसमें तीर्थ उद्वार एवं समाज सुधार पर विशेष बल दिया।

१९२६ - लखनऊ चातुर्मास, अजिताश्रम में चैत्यालय की स्थापना कराई, गोम्मटसार की अंग्रेजी टीका के संपादन में बा० अजितप्रसाद की सहायता की। बैरिस्टर जे० एल० जैनी का देहान्त। विधवा विवाह आन्दोलन उठाया। सेन्ट्रल जैन पब्लिशिंग हाऊस की लखनऊ में स्थापना कराई।

१९२७ – खंडवा चातुर्मास, "प्रतिष्ठासार संग्रह" की रचना की, जैन व्यायामशाला की स्थापना कराई। दक्षिण महाराष्ट्र दि० जैन सभा के अधिवेशन की अध्यक्षता की। अपने उग्र सुधारवाद के बढ़ते हुए विरोध के कारण संबद्ध संस्थाओं की सुरक्षा की दृष्टि से 'जैनमित्र" व "वीर" की संपादकी से तथा स्याद्वाद विद्यालय आदि से त्यागपत्र दे दिया।

१९२८ – रोहतक चातुर्मास, "बृहद् सामायिक पाठ" की टीका लिखी पं० उग्रसेन वकील से "नियमासार" का अंग्रेजी अनुवाद कराया।

१९२९ – उसमानावाद चातुर्मास, "समयसार-कलश-टीका का भावार्थ लिखा।

१९३० – अमरोहा चातुर्मास, बृहद्-जैन शब्दार्णव (पूरक द्वि० भाग) तथा "बृहतस्वयंभू-स्त्रोत" की टीका लिखी। इसी वर्ष परम प्रसंसिका महिलारत्न मगनबैन जे० पी० दिवंगत हुई।

१९३१ – मुरादाबाद चातुर्मास, "मोक्षमार्ग प्रकाशक" (पूरक द्वि० भाग) "महिलारत्न मगनबेन" पुस्तक लिखी।

१९३२ – सागर चातुर्मास, तारण स्वामी के साहित्य की टीकायें "तारण-तरण श्रावकाचार-टीका" तथा "जैन-बौद्ध तत्वज्ञान" (हिन्दी अंग्रेजी) लिखी। तारणपंथी समैया जैनो में जागृती फूंकी। सिंहल द्वीप (लंका) की यात्रा–बौद्ध विहार में रहकर बौद्ध-धर्म का विशेष अध्ययन किया। कोलम्बो आदि नगरों में जैनधर्म का प्रचार किया।

१९३३ – इटारसी चातुर्मास, वहाँ भा० दि० जैन परिषद का वार्षिक अधिवेशन कराया, तारण स्वामी कृत 'ज्ञान-समुच्चयसार" की टीका तथा 'जैनधर्म प्रकाश' पुस्तक लिखी। दि० २०-१०-३३ को इटारसी के तारण समाज द्वारा अभिनन्दन पत्र समर्पित। बर्मा की यात्रा की और रंगून में जैनधर्म पर कई भाषण दिये। रंगून की थियोसोफिकल सोसाइटी में कर्म-फिलासफी पर अंग्रेजी में भाषण दिया। (७-५-३३)

१९३४ – अमरावती चातुर्मास, पू० तारण स्वामी रचित उपदेश शुद्धसार की टीका एवं "सहज-सुख साधन" पुस्तकें लिखी।

१९३५ – लखनऊ चातुर्मास पूज्य तारण स्वामी कृत "ममलपाहुड़-टीका" (प्र० भाग) व "सारसमुच्चय टीका" लिखी। लखनऊ समाज द्वारा विनयपत्र समर्पित (११-११-३५)। बंबई के बौद्ध आनंद विहार में जैन एवं बौद्ध धर्म के तुलनात्मक अध्ययन पर अंग्रेजी में भाषण दिया। (१०-३-३५)

१९३६ – हिसार चातुर्मास, पूज्य तारणस्वामी कृत "ममलपाहुड़ ग्रंथ" की टीका (द्वि० व तृ० भाग) तथा 'जैन धर्म सुख की कुन्जी है' ट्रेक्ट (हिंदी एवं अंग्रेजी) में लिखे। लखनऊ के तीर्थयात्रा संघ का पथ प्रदर्शन किया।

१९३७ – दाहोद चातुर्मास में पूज्य तारणस्वामी कृत 'त्रिभंगीसार ग्रंथ व 'तत्वसार' की टीकाएं तथा 'जम्बूस्वामी-चरित्र का लेखन। उत्तर-पुराण के आधार से अजितादि २३ तीर्थंकरों का चरित्र अंग्रेजी में लिखकर बैरिस्टर चम्पतराय जी को इंग्लैंड भेजा।

१९३८ – मुल्तान चातुर्मास पू० तारणस्वामी कृत 'चौबीसठाणा-ग्रंथ' की टीका लिखी, "जैन धर्म में अहिंसा" और 'जैनधर्म दर्पण" पुस्तकें लिखीं।

१९३९ – रोहतक चातुर्मास, 'योगसार' की टीका लिखी। कम्प रोग का प्रारंभ, जिसका एक कारण यह बताया गया कि वह समय की बचत के लिए चलती हुई रेलगाड़ी में भी लिखते रहते थे।

१९४० – लखनऊ चातुर्मास, रूग्णावस्था में भी 'जैनधर्म में देव और पुरुषार्थ' पुस्तकें तथा 'स्वतन्त्रता' शीर्षक लेख लिखे। अब लखनऊ में ही रहे।

१९४१ – लखनऊ रोग के प्रकोप में विशेष वृद्धि। रोग जन्य परिषह को समतापूर्वक सहन।

१९४२ – १० फरवरी, फाल्गुन कृष्णदशमी के प्रातः ४ बजे समाधि-मरण पूर्वक देह-त्याग किया। अपार जनसमूह शवयात्रा एवं अन्त्येष्टि में सम्मिलित हुआ। जैन बाग, डालीगन्ज में दाहसंस्कार किया गया। कालांतर में उसी स्थान पर उनकी स्मारक समाधि का निर्माण हुआ।

विदेशों मे धर्म प्रचार की ललक

१९४४ में प्रकाशित 'वीर' के 'शीतल-विशेषांक' में हमने उन्हें "अपने युग का सबसे बड़ा मिशनरी" कहा था। वस्तुतः देश-विदेशों में जैन धर्म के प्रचार की जैसी उत्कट लगन एवं कामना ब्रह्मचारी जी में थी, वैसी किसी भी अन्य त्यागी या गृहस्थ समाज-सेवी में दृष्टिगोचर नहीं हुई। भारतवर्ष में तो सर्वत्र उन्होंने भ्रमण करके धर्म की प्रभावना की ही, बर्मा और श्रीलंका में रहकर बौद्ध धर्म एवं बौद्ध भिक्षुओं का भी परिचय प्राप्त किया। १९३३ ई० में "ए कम्पेरेटिव स्टडी आफ जैनिज्म एंड बुद्धिजम" शीर्षक ३०४ पृष्ठ की अंगेजी पुस्तक प्रकाशित कराई, जिसका हिन्दी अनुवाद "जैन बौद्ध तत्व-ज्ञान" के नाम से १९३४ में प्रकाशित कराया। बौद्ध-भिक्षु नारदथेर एवं स्वामी आनन्द मैत्रेय से पत्र व्यवहार किया। टोकियो (जापान) की इम्पीरियल युनिवर्सिटी की संस्कृत सेमिनरी को तथा अन्य बौद्ध विद्वानों को 'सेक्रेड बुक्स आफ जैन्स" ग्रन्थमाला के प्रकाशन भिजवाये। उनके एक पत्र के उत्तर में केलनिया (श्रीलंका) के विद्यालंकार कालेज के प्रधानाचार्य श्री धर्मानंद ने २१-३-१९३२ को लिखा था— "यहां विद्यालय में स्थान की कुछ कमी हैं, लेकिन फिर भी ठहरने के लिए मैं आपको एक कमरा दे सकूंगा। आप विद्यालय में आकर अपना अध्ययन चला सकते हैं। यहां इस समय त्रिपिटकाचार्य श्री राहुल सांकृत्यायन ठहरे हुए हैं। आप बौद्ध दर्शन के अतिरिक्त दूसरे भारतीय दर्शनों के भी पंडित हैं। आने की सूचना मिलने पर मैं यहां से म्युनिसिपल पासपोर्ट भिजवा दूंगा। मई मास के अन्त तक आप यहां पहुंच जायें तो आनन्द कौसल्यायन की भी आपसे भेंट हो सकेगी और ब्रह्मचारी जी श्रीलंका पहुंच गये तथा वहां की राजधानी कोलम्बो में १९३२ के जून की १,८ व १३ तारीखों को अंग्रेजी में तीन व्याख्यान क्रमशः "फिलासफी आफ जैनिज्म", अहिंसा दी सेन्ट्रल टेनेट आफ जैनिज्म" तथा "महावीर" दिये। वहां से वर्मा आये जहां रंगून की थियोसोफिकल सोसाइटी में ७ मई १९३३ को 'कर्म फिलासफी' पर अंग्रेजी में व्याख्यान दिया।

ओसाका (जापान) के स्कूल आफ फारेन लेग्वेजेज से १६-९-१९-३२ के पत्र में प्रो० अतरसेन जैन ने ब्रह्मचारी जी को लिखा था

I am in receipt of your letter dated the 18th August. It is really a very noble idea- your coming to this country .. There are schools and colleges where religious education is given.. Everything is done in Japanese language. Even one man out of a hundred cannot understand English. Sanskrit and Pali are taught in Imperial University at Tokyo. I shall do my best in making your stay here comfortable. I live in kobe, a prosperous sea-port. you can easily stay with me. One hundred rupees per month should suffice in case you stay with me. In case you live separately the expenses will come to about 150/-

बुद्धिस्ट मिशन इन इंगलेन्ड के धर्मानुशासक भिक्षु आनन्द कौसल्यायन ने ब्रह्मचारी जी को लन्दन से अपने १७-१०-१९३२ के पत्र में लिखा था-यहाँ पहुंचे अब चौथा महीना है । शीत उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है । घर में अंगीठी जलाने की आवश्यकता रहती है। आजकल ७४—७५ डिग्री पर पारा रहता हैं। अधिक सर्दी के दिनों में ३० डिग्री तक गिर जाता है, वस्त्र के संबंध में देश की जलवायु का ख्याल रखना जरूरी है। और किसी बात की परवाह करने की जरूरत नहीं हुई । जहाज में चढ़ते समय कुछ लोग पीत वस्त्र देखकर हँसे थे । लेकिन वह हंसी उसी दिन मिट गई । जहाज में, मार्सेल्ल में पेरिस में और लन्दन में हमारा वस्त्र वही हैं जो लका में था । लन्दन में कभी - कभी लोग मुझे देखकर गाँधी - गाँधी चिल्लाते हैं । मेरा मनोरंजन होता है । एक दिन एक आदमी ने कहा कि "गांधी नहीं , गांधी के लेड़के हैं । मैंने मन में कहा कि बहुत ठीक। " हां एक बात यहाँ आरम्भ की है, जो लंका में नहीं करता था। चीवर के अन्दर एक गर्म बनियन पहनाता हूं बिलकुल नगे बदन रहने में रोग मोल ले लेने का डर है भोजन के समय में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं हुई । जहाज में भी १२ बजे भोजन हो जाता था । मध्यान्ह के बाद न जहाज में कभी भोजन हुआ न यहाँ। प्रातःकाल साढ़े ७ बजे रोटी- दूध, और १२ बजे फिर दाल भात, सब्जी, फल । शरीर में किसी प्रकार की कोई दुर्बलता नहीं

भूख खूब लगती है। जिस रोज अधिक कोहरा पड़ता है, हाथ मुंह काला-काला हो जाता है, मिलों के धुंए से यह कोहरा लदा रहता है। अपनी तरफ से कोहरे से यह कहीं अधिक गाढ़ा होता है। आपके यहाँ आने की बात एक दिन श्री चम्पतराय जी ने मुझसे कही थी। आए तो अच्छा है। एक बार यह दुनियां भी देख लें। मैं समझता हूं आपको अपने किसी नियम में विशेष परिवर्तन करने की आवश्यकता न होगी। कुछ तो देश काल का भेद रहता ही है।

लन्दन से एक अन्य पत्र में उन्होंने ब्रह्मचारी जी को लिखा था- आपका १६-७-३२ पत्र यथासमय मिल गया था। श्री चम्पतराय जी से मिलकर मन बड़ा प्रसन्न हुआ। प्रति रविवार को सभा होती है, वह तो सभी दृष्टियों से एक सफल सभा कही जा सकती है— मैं कुछ कहता हूं। लोग ध्यान से सुनते हैं। टीका टिप्पणी प्रायः नहीं करते। अंगरेजों का यह जातीय गुण है कि सबकी सुनते हैं। कभी कभी कुछ लोग शंका समाधान के लिए आते हैं, वह ज्यादह उपयोगी होता है। अपना अधिक समय तो पढ़ने में ही कटता है। श्री राहुल जी आज ब्रिटिश म्यूजियम लाइब्रेरी में गये हैं। वैसे ही पुस्तकें पी रहे हैं, जैसे सीलोन में। एक मित्र जो एम० ए० हैं, संस्कृत पाली का उनको अच्छा ज्ञान है। वह जैनधर्म के बारे में जानने की चिन्ता में थे। उनका श्री चम्पतराय जी से परिचय करा दिया है।

विद्यावारिधी बैरिस्टर चम्पतराय जी ने लन्दन से अपने ७-७-१९३८ के पत्र में ब्रह्मचारी जी को लिखा था —

'I have come to the conclusion that a big scale Jaina Home in some central part of London is very desirable, but the difficulty is great about its founding We shall not only need about 300,000 to 400,000 to start it properly, but it must have a permanent residence Jaina Philosopher staying in it. At one time I thought you would be able to do it, but I now fear that the climate of this place will be too severely trying for you, and when you go away, there is no one else to take your place. I myself am quite

myself am stay here for more than 3 or 4 months out of 12. Besides, whosoever will be staying here will have be a compledte master of Christianity, from the constructive point of view, for the present. It will be enough to carry on the work through our Lond on Library, which has been doing very execellent work recently. If later on, there is a very pressing call and suitable facilities for the founding of a regular Home, it can be started then. The Buddhists had to face the same difficulties. When Bhikshu Ananda left this country, there was no one to take his place, and the place had to be closed virtually.

आध्यात्मिक सन्त

भगवत्कुन्दकुन्दाचार्य प्रणीत ग्रंथराज " समयसारप्राभृत " प्राचीन भारतीय आध्यात्मिक साहित्य का अमूल्य रत्न है और जैन परम्परा के आध्यात्मिक साहित्य का तो वह मूल स्रोत रहता आया है। गत दो सहस्त्रों वर्षों में अनेक संतों, योगियों एवं मुमुक्षु विद्वानों ने इस ग्रन्थ पर टीका, व्याख्या, वचनिका आदि की विभिन्न भाषाओं में रचना की, जिनमें १० वीं शती ई० के अमृतचन्द्राचार्य का प्रायः सर्वोपरि स्थान] है। उन्होंने न केवल समयसार की " आत्मख्याति नाम की संस्कृत टीका रची वरन मूल प्राकृत गाथाओं पर भावपूर्ण ललित संस्कृत " कलशों " की भी रचना की।

समयसार अध्यात्मशास्त्र है और उसमें मुख्यतः शुद्ध द्रव्य का निश्चय नयावलम्बी निरूपण है। अतएव अध्यात्मरसिक मुमुक्षुओं के लिये वह सदैव से प्रधान प्रेरणा स्रोत एवं सर्वाधिक प्रिय अध्ययनीय शास्त्र रहता आया है। क्योंकि अध्यात्मरस की एकान्तिक धारा में बहने वाले बहुत व्यवहार धर्म में शिथिल हो जाते हैं तथा करणानु-योग, चरणानुयोग एवं प्रथमानुयोग, के शास्त्रों की उपेक्षा करने लगते हैं तो उस समयसारी प्रवृत्ति की प्रतिक्रिया स्वरूप गोम्मटसारादि सैद्धा-न्तिक ग्रन्थों के पठन—पाठन पर अधिक बल दिया जाने लगता है। ऐसा बीच—बीच में प्रायः बराबर होता आया है, किन्तु जो मनीषी जैनधर्म के मर्म को समझते हैं, उसकी अनेकान्तिक प्रकृति को पहचानते हैं और उसकी नयअवस्था के जानकार हैं, वे समयसारी तथा गोम्मटसारी, दोनों धाराओं के बीच सुखद समन्वय स्थापित करके चलते हैं। वे निश्चय और व्यवहार दोनों का संतुलन साधकर स्वपर कल्याण करते है।

आधुनिक युग के गत सौ सवा सौ वर्षो में भी समयसारी तथा गोम्मटसारी पंडितों के दो वर्ग स्पष्ट दृष्टिगोचर होते रहे है। युग के आरम्भ काल के पंडितों बलदेवदास, अर्जुनलाल, धन्नालाल, मन्नालाल पन्नालाल, मुन्नीलाल, आदि विद्वान मुख्यतः सैद्धान्तिक एवं नैयायिक प्रतिभा के धनी रहे। समयसारी धारा में जो नाम व्यापक रूप से चमके श्रीमद रायचन्द्र भाई गृहस्थ थे, किन्तु उच्चकोटि के आध्यात्मिक

संत थे। जिसका प्रधान कारण समयसार का अध्ययन-मनन था। वह तत्वज्ञानी भी थे और आध्यात्मिक साहित्य के रचयिता रहे। महात्मागांधी उन्हें अपना गुरू एवं मार्ग दर्शक मानते थे। रायचन्द्र जी के अनुयायियों एवं प्रशंसकों का एक अच्छा दल बन गया, जिसने आगास में उनके नाम से एक संस्था एवं शास्त्रमाला की स्थापना की, जो अभी भी चल रही है। सोनगढ़ के आध्यात्मिक संत श्री कान जी स्वामी भी श्री रायचन्द्र भाई की भांति गुजराती एवं मूलत: श्वेताम्बर सम्प्रदाय के अनुयायी थे, किन्तु समयसार के अध्ययन मनन ने उनकी दृष्टि एवं जीवनधारा ही बदल दी। वस्तुत: इस युग में समयसार का जितना प्रचार-प्रसार एव प्रभावना कानजी स्वामी और उनके सस्थान द्वारा हुआ है, वह अद्वितीय है। स्वयं दिगम्बर परम्परा में भी जयपुर के प० जयचन्द्र छाबड़ा, दीपचन्द्र शाह आदि तथा "छहढाला की प्रसिद्धि के प० दौलतराम जैसे अध्यात्म मर्मज्ञों के अतिरिक्त कारजा के सेनसंघी भटटारक लक्ष्मीसेन (१८४२६५) समयसार के अध्येता एवं अच्छे प्रभावक बिद्वान थे। उनके शिष्य एवं पट्टधर वीरसेन स्वामी (१८७६—१९१८) तो समयसार के श्रेष्ठ मर्मज्ञ थे। ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी इन वीरसेन स्वामी जी को अपना अध्यात्म-विद्यागुरू मानते थे। वह कहा करते थे कि स्वामी जी घन्टों पर्यन्त समयसार का धाराप्रवाह व्याख्यान करते थे। और श्रोता मन्त्रमुग्ध होकर सुनते रहते थे। सन् १९१६ में ब्रह्मचारी जी ने कारजा में चातुर्मास किया, जिसमें मुख्य हेतु वीरसेन स्वामी के सान्धिय में अध्यात्मज्ञान लाभ करना था। हमने स्वयं ब्रह्मचारी जी को कई सार्वजनिक सभाओं में अध्यात्म विषय पर ड़ेढ़-दो घन्टे तक धारा प्रवाह में बोलते और उनके श्रोताओं को मंत्रमुग्ध होते देखा सुना है। यों में ब्रह्मचारी जी का रूझान अध्यात्म की ओर प्रारम्भ से ही कुछ विशेष था, १९१६ के पूर्व ही उनकी तत्वमाला, अनुभवानंद, स्वसमरानंद, नियमसार टीका समयसार की तात्पर्यबृत्ति टीका की वचनिका आदि रचनाएं प्रकाशित हो चुकी थी। समयसार कलश की उनकी टीका १९२८ में प्रकाशित हुई। ब्रह्मचारी जी की छोटी बड़ी लगभग ८० कृतियों का पता चलता है, जिनमें से २५ अध्यात्म विषयक हैं। इस प्रकार ब्रह्मचारी जी अपने समय के जैन समाज में समयसार एवं अध्यात्म के प्राय: सर्वो परि व्याख्याता थे। तथापि उनकी यह एक बड़ी विशेषता रही कि

वह निश्चयैकान्त में नहीं बहे, वरन सभी चारों अनुयोगों को सम्हाल कर चलते थे, अतः वह समन्वयवादी अनेकान्ती थे। क्षु० क्षु० गणेशप्रसाद वर्णी, क्षु० सहजानंद (मनोहरलाल) वर्णी प्रभृति कई अन्य अध्यात्म रसिक एवं समयसारादि के व्याख्याता विद्वान भी इस युग में हुए, किन्तु उन सबकी प्रवृत्ति भी समन्वयवादी रही। यही बात कई एक सिद्धान्त मर्मज्ञ वर्तमान पंडितों के विषय में भी कही जा सकती है।

खेद का विषय है कि अपने युग के अग्रणी समयसार मर्मज्ञ एवं प्रभावक आध्यात्मिक सन्त ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी को समय के साथ लोग भूलते जा रहे है।

साहित्य साधना

गत तीन-चार वर्षो में, जबसे स्व० ब्र० शीतलप्रसाद जी की जन्म शताब्दी का अभियान चला है, लोगों में उनकी कृतियों के विषय में विशेष जिज्ञासा होती रही है। "वीर" में अ० भा० दि० जैन परिषद के महामंत्री श्री हुकुमचन्द्र जैन की विज्ञप्ति भी ब्रह्मचारी जी की रचनाओं के पुनः प्रकाशन के सम्बन्ध में प्रकाशित होती रही हैं किन्तु उसकी कोई विशेष प्रतिक्रिया देखने में नहीं आई। दो एक सज्जनों ने अवश्य लिखा है कि ब्र० शीतलप्रसाद जी की अमुक पुस्तक पुनः प्रकाशित होनी चाहिए, यथा प्रो० अनन्त प्रसाद जैन "लोकपाल" का सुझाव था कि उनकी समयसार टीका प्रकाशित की जाय, जो उन्होंने इस वर्ष अपने व्यय से प्रकाशित भी करा दी।

ब्रह्मचारी जी का साहित्य विपुल है। जैनमित्र तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित सैकड़ों लेखों के अतिरिक्त, लगभग पचहत्तर पुस्तकें उनके द्वारा रचित हैं। इनमें से १८ तो प्राचीन संस्कृत या प्राकृत ग्रंथों के अनुवाद-टीकादि हैं, शेष सब प्रायः मौलिक हैं और आध्यात्मिक, सैद्धान्तिक, धार्मिक, पौराणिक, भक्ति, ऐतिहासिक आदि विविध विषयों पर रचित हैं। बड़ी पुस्तकें भी हैं और छोटे-छोटे ट्रेक्ट भी हैं। सात पुस्तकें अंग्रेजी में है शेष सब हिन्दी में है,। कुछ के गुजराती आदि अन्य भाषाओं में अनुवाद भी हुए हैं।

हमारी पीढ़ी के लोगों में से अनेकों ने ब्रह्मचारी जी के प्रायः सम्पूर्ण साहित्य को देखा है, पढ़ा है, पसन्द भी किया है, किन्तु गत ३०—३५ वर्षों में होश सम्हालने वाली पीढ़ियों में से शायद कुछ एक ही ऐसे होंगे जिन्होंने उक्त पुस्तकों को देखा या पढ़ा हो। इसमें सन्देह नहीं कि ब्रह्मचारी जी कि भाषा और शैली आज के युग के लिए पुरानी हो चली है। उनके साहित्य का एक बड़ा भाग समसामयिक महत्व का भी था, किन्तु ऐसा नहीं है कि उसमें स्थायी महत्व का कुछ नहीं है, अथवा आज के युग के लिए वह सर्वथा अनुपयोगी है यदि तीन-चार सुविज्ञ व्यक्तियों।की एक समिति ब्रह्मचारी जी की समस्त कृतियों को मिलकर देखने का कष्ट करे तो ऐसी कई कृतियों के पुनः प्रकाशन एवं प्रचार की संस्तुति की जा सकती है।

नीचे ब्रह्मचारी जी की ज्ञात एवं प्रकाशित कृतियों की वर्गीकृत सूची दी जा रही है, जिससे पाठकों को उस धर्म और समाज के महान सेवक की साहित्य सेवा का भान होगा :—

टीका-अनुवादित :

१- समयसार- आत्मख्याति (कुन्दकुन्दाचार्य कृत समयसार की अमृत चन्द्राचार्य कृत आत्मख्याति टीका का अनुवाद)

२- समयसार कलश (पंडित राजमल्ल कृत टीका का अनुवाद)

३- प्रवचनसार (कुन्दकुन्द) की भाषा टीका, ३ भाग

४- पंचास्तिकाय (कुन्दकुन्द) की भाषा टीका, २ भाग

५- नियमसार (कुन्दकुन्द) की भाषा टीका (दिल्ली से ४-५ वर्ष पूर्व पुनः प्रकाशित हुई है)

६- बृहत स्वयंभूस्तोत्र (समन्तभद्र) की भाषा टीका

७- समाधिशतक (पूज्यपाद), भाषा टीका

८- इष्टोपदेश (पूज्यपाद) भाषाटीका

९- सामायिक पाठ व तत्वभावना (अमितगति) भाषा टीका

१०- तत्वसार (देवसेन) भाषा टीका

११- योगसार (योगीन्दु) भाषा टीका

१२- त्रिभंगीसार (तारणस्वामी) भाषा टीका

१३- सार-समुच्चय (कुलभद्र) भाषा टीका

१४- श्रावकाचार (तारणस्वामी) भाषा टीका

१५- ज्ञानसमुच्चयसार (तारणस्वामी) भाषा टीका

१६- उपदेश शुद्धसार (तारणस्वामी) भाषा टीका

१७- ममलपाहुड़ (तारणस्वामी) भाषा टीका (३ भाग)

१८- आध्यात्मिक चौबीस ठाणा (तारणस्वामी) भाषा टीका

१९- छहढाला (दौलतराम) भाषा टीका

मौलिक रचनाएं :—

(क) पूरक ग्रंथ

१- मोक्षमार्ग - प्रकाशक, द्वि भाग (पं० टोडरमल के अपूर्ण ग्रंथ की पूर्ति)

२- बृहद्‌शब्दार्णव - द्वि० भाग (मा० बिहारीलाल चैतन्य के अपर्ण कोष की पूर्ति)

(ख) ऐतिहासिक

१- प्राचीन जैन स्मारक — बंगाल, बिहार, उड़ीसा
२- प्राचीन जैन स्मारक — संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश)
३- प्राचीन जैन स्मारक — मध्यप्रांत, मध्यभारत, राजस्थान
४- प्राचीन जैन स्मारक — बंबई प्रांत
५- प्राचीन जैन स्मारक — मद्रास व मैसूर प्रांत
६- दानवीर सेठ माणिक चन्द्र (बृहत् जीवन चरित्र)
७- महिलारत्न मगनबाई

(ग) पूजा प्रतिष्ठा

१- प्रतिष्ठासारसंग्रह
२- दीपमालिका विधान

(घ) भक्ति

१- सुखसागर भजनावली - २ भाग

(ङ) पौराणिक कथा

१- सुलोचना चरित्र
२- जम्बुस्वामी चरित्र

(च) आध्यात्मिक

१- अनुभवानंद, २- स्वसमरानंद, ३- आत्मधर्म, ४- तत्वमाला (२ आवृत्ति) ५- सहजानंद सोपान, ६- सहज सुख साधन, ७- आध्यात्मिकसोपन, ८- निश्चय धर्म का मनन ९- जैन बौद्ध तत्वज्ञान (२ आवृत्ति)

(छ)- धार्मिक :-

१- जैन धर्म प्रकाश, २- विद्यार्थी जैन धर्म शिक्षा, ३- गृहस्थ धर्म ४- मानव धर्म, ५- जैन धर्म में अहिंसा ६- जैन धर्म में दैव और पुरुषार्थ

(ज) अंग्रेजी :-

1. What is Jainism. 2 Principles of Jainism
3. Selections from Atma-Dharma
4. Jain and Buddhist Tattvajnana
5. Barah Bhavana (Eng. trans.) 6 The Twenty-Three Tirthankaras. 7. Gommatasara-Karmakand, Vol. II (In Collaboration with B. Ajit Prasad)

(झ) ट्रेक्ट आदि :-

१- जिनेन्द्रमत दर्पण २- जैनधर्म दर्पण, ३- सनातन जैनमत, ४- सच्चे सुख की कुंजी, ५- आत्मानंद का सोपान, ६- आध्यात्मिक निवेदन ७- अध्यात्मज्ञान, ८- मिथ्यात्व निषेध, ९- दशलक्षण, १०- अहिंसा, ११- सच्चे सुख का उपाय, १२- जैन धर्म क्या है ?, १३- जैन धर्म की विशेषताएं, १४- आत्मोन्नति या खुद की तरक्की, १५- मुक्ति और उसका साधन, १६- सुख शांति की कुन्जी, १७- विधवाओं और उनके संरक्षकों से अपील, १८- जैन नियम पोथी, १९- सामायिक पाठ टीका (छोटी), २०- महावीर भगवान और उनका उपदेश।

उपरोक्त सूचीगत रचनाओं के अतिरिक्त भी ब्र० जी की अन्य छोटी-छोटी कृतियां हो सकती हैं। जिन सज्जनों को ज्ञात हों वे सूचित करने की कृपा करेंगे। यह भी संभव है कि उनकी कुछ रचनाएं अप्रकाशित भी कहीं पड़ी हों। उनकी सूचना भी अपेक्षित है। उपरोक्त रचनाओं में से अनेक, विशेषकर आध्यात्मिक वर्ग की रचनाएं सदैव पठनीय एवं मननीय रहने वाली है। उनका प्रतिष्ठासार-संग्रह एक सुधारवादी प्रयोग था। उन्होंने स्वयं दो एक प्रतिष्ठायें उसके अनुसार

कराई थी, किन्तु प्रतिष्ठाचार्यों को वह अनुकूल नहीं पड़ा। प्राचीन जैन स्मारिकों से संबंधित पुस्तकें उस काल में पाएनियर कार्य था, उपयोगी भी रहा, किन्तु अब उनके नए संस्करण हों तो उनमें पर्याप्त संशोधन एव संबर्द्धन की आवश्यकता होगी। जिन ग्रंथों की ब्र० जी ने टीकायें लिखीं उनमें से तारणतरण साहित्य को छोड़कर कई टीकाएं कालान्तर में पुनः प्रकाशित हो चुकी हैं। अतएव उनमें से शायद एक दो ही ऐसी निकलें जिनका पुनः प्रकाशन उपयोगी होगा। जैनमित्र, वीर, आदि की फाइलों से ब्रह्मचारी जी के लेखों का संग्रह करके उनमें से अनेक लेख ऐसे चुने जा सकते हैं जिनका संकलन प्रकाशनीय होगा।

इस बात की आवश्यकता अधिक है कि ब्रह्मचारी जी के प्रगतिशील एवं सुधारवादी विचारों में से जो भी समयोपयोगी हैं, उनका अच्छा प्रचार किया जावे और उनके मिशन को आगे बढ़ाया जाय।

ब्रह्मचारी जी कृत समयसार-कलस भाषा-टीका की प्रसस्ति

अग्रवाल शुभ वंश में, जन्म लखनऊ जास ।
पिता सु मक्खन लाल है, पुत्र तृतीय हूं तास ॥१॥
उन्नीससौ पैंतीस बरस, विक्रम संवत जान ।
जन्म सुकार्तिक मास में, "सीतल" नाम बखान ॥२॥
बत्तिस वय अनुमान में तज प्रपंच दुखदाय ।
श्रावक व्रत निज शक्ति सम, धरे आत्म सुखदाय ॥३॥
भ्रमण करत साधत धरम, वर्षा ऋतु इक थान ।
वसत ज्ञान संग्रह करण, संगति लखि सुखदान ॥४॥
विक्रम छियासी उन्निसे, उन्निस उन्तिस मांहि ।
धाराशिव वर्षाऋतु, रहा आन सुख छांहि ॥५॥
दो सहस्त्र ऊपर भये, जैनी नृपकरकंडु ।
उत्तर दिशा पर्वत तले, गुफा माहि गुणमंडु ॥६॥
पार्श्वनाथ जिन बिम्बसों, पल्यकासन धार ।
ध्यानमई पाषाणमय, रच्यो हस्तनी सार ॥७॥
दर्शन पूजन जासको, करत पाप क्षय होय ।
स्वानुभूति निज में जगे, सुख उपजे दुख खोय ॥८॥
हूमड़ जाति शिरोमणि, नेमचन्द्र गुणवान ।
भ्राता माणिकचन्द्र हैं, गृही धर्मरत जान ॥९॥
हीराचन्द्र सुश्रेष्ठि है, और शिवलाल बखान ।
नेमचन्द्र अध्यात्म प्रिय, जाति खण्डेला जान ॥१०॥
श्रेष्ठि नेम पुत्री गुणी, माणिकबाई नाम ।
धर्म प्रेम वात्सल्ययुत, धरत शांत परिणाम ॥११॥
इत्यादि साधर्मि यह, काल शास्त्र रस पान ।
करत जात अनन्द से, बढ़त ज्ञान अमलान ॥१२॥
नूतन मन्दिर एक है, ऋषभदेव भगवान ।
पार्श्वनाथ को जीर्ण है, मन्दिर दूजो जान ॥१३॥

थिरता लखि के ग्रन्थ यह, लिखौं स्वपर सुखदाय ।
गुण प्रकाश को भवि पढ़ें, निज रुचि समकित पाय ॥१४॥
राजमल्ल ज्ञानी भये, टीका रची महान् ।
समयसार कलश की, भाषा अतिसुखदान ॥१५॥
कुन्दकुन्द आचार्यकृत, समयसार अविकार ।
प्राकृतमय का भाव लहि, अमृतचन्द्र गुणकार ॥१६॥
संस्कृत कलशा भर दिए, अध्यात्म रस सार ।
पान करत ज्ञानी सबै, लहैं तृप्ति अविकार ॥१७॥
राजमल्ल कौ बुद्धि को, हो प्रकाश चहुथान ।
लिखो स्वपर हित जानके, ज्ञान ध्यान सुखखान ॥१८॥
आश्विन सुदि चौदह दिना, वार बृहस्पति जान ।
नेमचन्द्र के थान में, कियो पूर्ण अवहान ॥१९॥
पढ़ो पढ़ावों भविक जन, अध्यात्म रूचि धार ।
भेद ज्ञान पावों विमल ग्रहो आत्म सुखकार ॥२०॥
करो मनन निज तत्व को, हो अनुभूति निजात्म ।
निज में थिरता पायके, पावों पद परमात्म ॥२१॥
निज सुख निज में ही बसे, निज से प्रापत होय ।
निज को है दीजे सदा, निज ज्यों तिरपित होय ॥२२॥
आपी मारग मोक्ष का, आपी मोक्ष स्वरूप ।
निज अपनी आपी लखा, आपी हुआ अनूप ॥२३॥
निश्चय आपी आपको, शरण धरम सुखदाय ।
व्यवहारित पंच परम गुरू, है सहाय गुणदाय ॥२४॥
अर्हंतसिद्धाचार्य उपाध्याय यतिनाथ ।
बार-बार बन्दन करूं, हस्त जोड़ दे माथ ॥२५॥

भगवत्कुन्दकुन्दाचार्य कृत ग्रन्थराज समयसार पर अमृतचन्द्राचार्य द्वारा रचित संस्कृत टीका की पांडे राजमल्ल जी की टीका के आधार से स्वरचित भाषा के टीका के अन्त में २५ दोहों में निबद्ध अपनी प्रशस्ति में ब्रह्मचारी जी ने स्वयं अपने जन्मस्थान, पितृनाम, वंश जन्मतिथि, व्रतग्रहण तिथि, प्रस्तुत ग्रन्थ (टीका) का रचना स्थान, रचनातिथि, रचना में प्रेरक अथवा निमित्त साधर्मी सज्जनों का संक्षिप्त परिचय आदि ज्ञातव्य प्रदान कर दिये हैं। सन् १६२६ ई० का चातुर्मास उन्होंने आन्ध्रप्रदेशस्थ धाराशिव नगर में किया था। उस नगर के निकट ही पर्वत पर वह अत्यन्त प्राचीन जैन गुफा-मन्दिर है जिसमें भगवान पार्श्वनाथ के तीर्थ में उत्पन्न प्रतापी जैन नरेश महाराजा करकंडु ने उक्त तेईसवें तीर्थंकर की सातिशय विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठापित की थी। जैसे ही जैन पुरातत्व के प्रेमी एवं सतत् खोजी ब्रह्मचारी जी का ध्यान धाराशिव की जैन गुफाओं की पुरातात्विक निधि ने स्वभावतः आकृष्ट किया। उन्होंने उसका निरीक्षण परीक्षण किया और अपने लेखों आदि में परिचय दिया। उक्त तीर्थस्थल की पवित्रता भगवान की सातिशय मनोज्ञ प्राचीन प्रतिमा के दर्शन पूजन, स्वअभिरुचि तथा उक्त नगर के निवासी अध्यात्मरसिक साधर्मी सेठ नेमचन्द्र प्रभृति श्रावक-श्राविकाओं के आग्रह का निमित्त पाकर ब्रह्मचारी जी ने उक्त वर्षावास में इस टीका का प्रणयन किया और आश्विन शुक्ल चतुर्दशी, बृहस्पतिवार, वि॰सं॰ १९८६ (सन् १९२९) के दिन वहीं उसे पूर्ण किया था।

ब्रह्मचारी जी की ऐसी प्रशस्तियाँ या आत्मपरिचय उनकी कुछ अन्य कृतियों में भी प्राप्त हो सकती हैं।

ब्रह्मचारी जी की वैराग्य भावना

हे नित्य न कोई वस्तु जान संसारी.
याके भ्रम में नित फसे रहें व्यवहारी।
तन धन कुटुम्ब ग्रह क्षेत्र क्षणक में विनसे.
भावो अनित्य यह भाव आत्म चित परसे ॥ १ ॥

कोई न शरणत्रैलोक्य मांहि तुम जानों,
नर नारक देव तिर्यन्च कालगत मानों।
रे आतम, शरण गहो पवित्रातम की.
निर्भय पद लहके तजो फिरन गति-गति की ॥ २ ॥

चऊं गति दुखकारी जीव सुख नहीं पावे,
गयो काल अनन्ता बीत, छोर नहीं आवे।
जिनवर के धर्म बिन गहे सुभग न लखावे,
सुखसागर है जिन धर्म, भव्य नित न्हावे ॥ ३ ॥

इकले ही जन्में, मरे, कर्मफल भोगे,
इकलों रोवे, दुख लहे, पाप के जोगे।
जब मरे, छोड़ तब साथ, एकला जावे,
एकाकी आतम सत्य सुधी न ध्यावे ॥ ४ ॥

बारह भावों का भाव नित्य संसारी,
ज्यों रात मिथ्यातम मिटें उषा हो जारी।
आतम ज्ञान का सूर्य करे उजियाला,
जिसके प्रगटें पर पीवें अमृत प्याला ॥ ५ ॥

ज्यों ज्यों स्वतृप्तता बढ़ें, विषय सुख भूलें,
चरित्र हस्ति तिस घर के द्वार में नित झूले।
चढ़ चले, सुगम पद धरे, मोक्ष बस्ती को,
पहुंचे शिवतिय को मिलें, तजे हस्ति को ॥ ६ ॥

यह छंद अगहन की चौ-पक्ष में गावे,
बदि पंदरस परथम पहर मन में उपजाये।
मन वचन सुचि कर जो नर-नारी गावें,
डूब सुखोदधि, चित्त विकार मिटावें ॥ ७ ॥

जिस दिन शीतल प्रसाद जी ने ब्रह्मचर्य प्रतिमा ग्रहण की थी, उसी दिन ऊषाकाल में उन्होंने उपरोक्त भावनाओं की रचना की थी। और इन्हीं वैराग्योत्पादक छंदों को गुनगुनाते हुए वह शोलापुर में अगहन बदी १५, वीर-निर्वाण संवत् २४३६, तदनुसार सन् १६०६ ई० की प्रात: वेला में पूज्य ऐल्लक पन्नालाल जी के समक्ष दीक्षा लेकर सातवी प्रतिमाधारी परिव्राजक बने थे।

ब्रह्मचारी जी का एक प्रिय भजन

सुन मूरख प्राणी, कैं दिन की जिन्दगानी,
दिन-दिन आयु घटत है तेरी, ज्यों अंजुली का पानी।
काल अचानक आना पड़े तब चले न आना कानी ॥
सुन मूरख प्राणी ....

कोड़ी-कोड़ी माया जोड़ी, बन गये लाख करोरी।
अंत समय सब छूट जायेगा, न तोरी न मोरी ॥
सुन मूरख प्राणी ....

ताल गगन पाताल बनों में, मौत कहीं न छोड़ी।
तहखानों तालों के अन्दर, गर्दन आन मरोड़ी ॥
सुन मूरख प्राणी ....

ब्रह्मचारी जी के वाक्य दीप

१. देश सेवा धर्म है - व्रत कठिन है। यह एक ऐसा यज्ञ है जिसमें अपने को होम देना होता है। अपने को भारतीय समझो।

२. अहिंसा वीरों का धर्म है, धैर्यवानों का धर्म है, यही जगत की रक्षा करने वाली है। भारत की गुलामी का कारण अहिंसा नहीं, बल्कि हिन्दू राजाओं के भीतर परस्पर फूट होना है।

३. धर्म तो वह साधन है, वह ज्ञान है, वह आचरण है जो देहधारी प्राणी को संसार के दुख से बचाकर अक्षय अनन्त-सुख में पहुंचा देता है। वह धर्म स्त्री-पुरुष, युवक, वृद्ध, रोगी दरिद्री, लक्ष्मीपति, हर कोई ग्रहण कर सकता है। जैन धर्मानुयायी स्वतः सुखी रहता है और किसी अन्य जीव को मानसिक या शारीरिक कष्ट नही देता।

४. जिस आत्मा में अपने आत्मिक गुणों का विकास करने में उनका सच्चा स्वाद लेते हैं, उनको स्वाभाविक अवस्था के विकास करने में, कोई पर वस्तु के द्वारा विघ्न बाधा नहीं है, वहां स्वतंत्रता का सौन्दर्य है। स्वतन्त्रता आभूषण है, परतन्त्रता बेड़ी है। स्वतन्त्रता प्रकाश है, परतन्त्रता अधकार है। स्वतंत्रता मोक्षधाम है, परतन्त्रता संसार है।

५. लोकालोक का ज्ञाता शुद्ध चैतन्यमय अविनाशी, निर्विकल्प परमानंदस्वरूप प्रभु अपने स्वरूप को भूलकर परपद में आरूढ़ हो खेदित हो रहा है।

६. यदि अपने पुरुषार्थ को सम्हालें, कुमार्ग को त्याग सुमार्ग पर आवें, एकान्त में या सुसंगति में विचार करें तो अपने ही बल से मिथ्यात्व गुणस्थान छोड़ने में सामर्थ्यवान हो, सम्यक्त्वगुणस्थान पर पहुंच जाता है।

७. निर्विकल्प दशा में द्वैतभाव छूट जाता है, अद्वैत का रंग आ जाता है। मार्ग खोजी आत्माओं को निश्चय करना चाहिए कि यही त्रिलोक में सार है, अन्यथा सब संसार असार है। यही मार्ग निराकुल आनन्द का स्त्रोत और भवोदधि का पोत है।

८. यह आत्मा अवश्य एक न एक दिन मोह शत्रु को परास्त करके शिवनगरी का राज्य करेगा। यह दयामय प्राणी-संरक्षक युद्ध है।

९. जैनधर्म क्षत्रिय वीरों का धर्म है- २४ तीर्थंकर, १२ चक्रवर्ती, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण, ९ बलभद्र सब क्षत्रिय जैन थे। अग्रवाल, ओसवाल आदि भी क्षत्रिय वंशज हैं। व्यापार-वाणिज्य करने से बनियें कहलाने लगे। वणिकवृत्ति के साथ कायरता समा गई, आलस्य और प्रमाद ने जोर पकड़ा, धर्म दिखावे की चीज रह गया। जैन खुद जैनी नहीं रहे। जब जैनियों में ही जैनत्व नहीं रहा तो जैनधर्म और जैन समाज का प्रभाव लुप्त हो गया।

१०. जैनधर्म जगत भर का उपकारक है। इसका प्रचार जगत में होना चाहिए। प्राचीन काल में जैनाचार्यों ने हजारों लाखों अजैनों को एक दिन में जैन बनाया था। जैन धर्म पतितों का उद्धारक है। हिंसक भील श्रावकव्रत पालकर अन्ततः महावीर तीर्थंकर हुआ।

११. जैन समाज की सख्या घटती जा रही है। वह मरणासन्न है। उसकी रक्षा के उपाय में देर करना बड़ी कठोर निर्दयता है।

१२. जिनालयों का भंडार किसी विशेष स्थानीय मंदिर की संपत्ति नही है। उसका सदुपयोग अन्य स्थानों में जहाँ जरूरत हो जीर्णोद्वार, विद्याप्रचार, धर्मप्रसारार्थ किया जाये।

मात्र १८ वर्ष की आयु में २४ मई १८९६ ई० के जैन गजट में ब्र० जी ने लिखा था —

'ऐ जैनी पंडितो, यह धर्म आप ही के आधीन है। इसकी रक्षा कीजिए, ज्योति फैलाईये, सोतों को जगाइये और तन मन धन से परोपकार और शुद्धनिखार लाने की कोशिश कीजिए, जिससे आपका यह लोक और परलोक दोनों सुधरें।"

महा-प्रयाण

तीव्र असाता कर्म के उदय से पूज्य ब्रह्मचारी जी अपने जीवन के अन्तिम साधिक तीन वर्षों में रोग के प्रबल प्रकोप से आक्रान्त रहे। रोग के कारणों पर प्रकाश डालते हुये स्व० बा० अजितप्रसाद जी ने (ब्र० सीतल, पृ० ११४ आदि में) लिखा है कि 'ब्रह्मचारी जी ने पूरे पांच वर्ष तक सोच विचार करके अपनी योग्यता, सहन शक्ति और धैर्य का अन्दाजा लगाकर श्रावक की सप्तम प्रतिमा धारण की थी, परन्तु वह वह वास्तव में अनागार साधु सदृश सतत् बिहार करते रहे सिवाय चातुर्मास के अतिरिक्त किसी एक स्थान पर वह अधिक दिन नहीं ठहरते थे। इस नियम का अपवाद कभी कभी हो जाता था जबकि उनको किसी ग्रन्थ के संपादनार्थ अन्य पुरूष के सहयोग की आवश्यकता होती थी या कोई विशेष धार्मिक कार्य उपस्थित हो जाता था। रेलयात्रा का उनको इतना अभ्यास हो गया था कि चलती मेल ट्रेन में भी वह लिखते रहते थे, त्रिकाल सामयिक भी कर लेते थे। कभी कभी कलकत्ते से बम्बई तक बिना कहीं रास्ते में ठहरते हुए निर्जल उपवास करते चले जाते थे। उनकी इस असामान्य वृत्ति के कारण कुछ हास्यरसास्वादी उनको "रेलकाय का जीव" कहा करते थे। महात्मा गांधी के आचरणानुसार ब्रह्मचारी जी सदैव रेल के तीसरे दर्जे में ही सफर करते थे परन्तु बिना किसी साथी, मददगार या सेवक के अकेले ही बिहार किया करते थे। भोज्य पदार्थ की शुद्धता के नियम के कारण उनको कभी कभी उपवास करना पड़ जाता था और कभी रूखी खिड़की या बिना घी की दाल रोटी पर ही रहना पड़ता था। अष्टमी चतुर्दशी का तो निर्जल उपवास और अन्य दिन चौबीस घंटे में एक समय भोजन तो उनका नित्य नियम था। इस प्रकार का कठिन जीवन सहते सहते और अविराम लिखते रहने का परिश्रम करते करते उनके शरीर पर वायुकंप रोग ने आक्रमण कर दिया। हाथ की और पैर की उगलियां हिलती रहने लगीं, हाथ कांपने लगे, लिखना मुश्किल हो गया, पैर लड़खड़ाने लगे, शरीर कृश हो चला

१९३८ में रोहतक के श्रीयुत लालचन्द्र जी, नानकचन्द जी, उग्रसेन जी तथा अन्य साधर्मी भाइयों ने उनकी सेवा, वैयावृत्य, सब

प्रकार का इलाज. तन-मन-धन से भक्तिपूर्वक किया । दिल्ली में बिजली के सेंक का इलाज कराया गया। फिर बम्बई चले गये। वहां भी विभिन्न प्रकार का चिकित्सा और सेवा की गई। जुलाई १९४० में रुग्णावस्था में लखनऊ आये । टाटपट्टी चाहिबागंज की धर्मशाला में रहकर एक हकीम का इलाज बहुत दिन तक होता रहा । रोहतक से एक ब्राह्मण परिचर्या के लिए उनके साथ आया था । ला० मन्नालाल कागजी व उनका परिवार, ब्र० जी के भानजे ला० बराती लाल जी, ब्र० जी के भाई सन्तूमल जी व भतीजे धर्मचन्द्र एवं सुमेरचन्द्र तथा अन्य सब जैन स्त्री पुरुष भक्तिभाव से सेवा में लगे रहे परन्तु कुछ लाभ न हुआ। बल्कि बीमारी एवं निर्बलता बढ़ती गई । ६ दिसम्बर, १९४० को ब्रह्मचारी जी अजिताश्रम पधारे, वहां एक डाक्टर द्वारा बिजली का इलाज शुरु किया गया । उससे इतना लाभ हुआ कि शरीर का वजन ८० से बढ़कर १०० पौंड हो गया, नाखूनों की सफेदी जाती रही, बदन की झुर्रियां मिट गई, मलावरोध की बाधा दूर हो गई और भूख भी काफी खुल गई । कंपन का वेग भी कम हो गया, मुंह से लार टपकना भी बन्द हो गया, और सड़क पर बिना किसी के सहारे आधा मील तक घूम भी आते थे। दो वैतनिक कर्मचारी, एक वैतनिक वैद्य और अजिताश्रमवासी स्त्री-पुरुष सेवा में लगे रहते थे। बीच बीच में कानपुर से वैद्यरत्न हकीम कन्हैयालाल जी भी देखने के लिये आते रहते थे और बहुमूल्य औषधियां बिना मूल्य भेजते रहते थे। दो तीन बार दि० जैन परिषद के प्रधान मन्त्री रतनलाल जी (बिजनौर) की मित्रता के नाते ख्यातिप्राप्त वैद्य शिवरामजी भी पधारे। झवाई टोले के खानदानी हकीम अब्दुल हलीम को भी दिखाया गया । भाप का इलाज हुआ, तेल की मालिश कराई गई । सूरत से सेठ मूलचंद किसनदास कापड़िया भी ब्र० जी से मिलने आये। पर्युषण पर्व में ब्र० जी नगर के विभिन्न जिनालयों में भी दर्शनार्थ गये ।

७ अक्टूबर १९४० की रात्रि में ११-१२ बजे ब्रह्मचारी जी की जुबान जो मुद्दत से बन्द थी एकाएक खुल गई। समयसार गाथा और समयसार कलशा स्पष्ट स्वर से लेटे लेटे देर तक पढ़ते रहे और व्याख्यान रूप बोलते रहे । बा० अजित प्रसाद जी को बुलाया और कहने लगे कि बाराबंकी, अयोध्या, बनारस, आरा, पावापुरी, राजगृही

की यात्रा करते हुए शिखर जी की वन्दना करके ईसरी में रहने का विचार किया है — आप भी मेरे साथ चलिये, मेरी जुबान खुल गई है, रास्ते में उपदेश देते चलेंगे। बाबू जी ने स्वीकृति दी, किन्तु दिन निकलने पर जुबान फिर बन्द हो गई। ६ जनवरी १९४२ को रात्रि को लघुशंका निवृत्ति करके खड़े होने पर एकाएक गिर पड़े और कहने लगे कि मेरी कूल्हे की हड्डी टूट गई। किंतु आर्त्तनाद, क्रदन, हाय-हाय रंचमात्र भी नहीं किया। प्रातः डाक्टर को दिखाया तो उसने मेडीकल कालेज ले जाने की सलाह दी—ज्ञात हुआ कि कूल्हे की हड्डी चार जगह से टूट गई है। पैर से कूल्हे तक पूरी टांग पर १० ता० को प्लास्टर चढ़ा दिया गया और १४ जनवरी को उन्हें अजिता-श्रम ले आया गया, किन्तु २८ ता० को जब यह ज्ञात हुआ कि प्लास्टर के अन्दर घाव हो गये हैं तो मेडिकल कालेज में ले जा कर प्लास्टर कटवाकर घावों का इलाज चला। डाक्टर रोज गली हुई खाल, बिना बेहोशी की दवा सुँघाए काटते थे, किन्तु ब्रह्मचारी जी के चेहरे पर पीड़ा के चिन्ह नहीं दिखाई देते थे, न कभी उन्होंने 'हाय' शब्द मुँह से निकाला। घाव बढ़ता ही गया और ६ फरवरी को उन्हें अस्पताल से टाट पट्टी आहियागंज की धर्मशाला में ले आया गया।

सागर के एक धनी जमींदार के सुपुत्र श्री राधेलाल समैया, जो राष्ट्रीय सत्याग्रह में जेल यात्रा भी कर आये थे लखनऊ आये और भक्तिवश ब्रह्मचारी जी की सेवा में तल्लीन हो गये। वह अपने हाथ से उनका मल-मूत्र धोते, कपड़े बदलते, अस्पताल में उनके पलंग के पास ही भूमि पर सोते, और हर प्रकार की कल्पनातीत परिचर्या उत्साह पूर्वक करते थे। अस्पताल से आने पर धर्मशाला में भी उनकी वैयावृत यथावत करते रहे। उन्हीं दिनों स्याद्वाद विद्यालय काशी के पंडित महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य भी आये और ब्रह्मचारी जी उनके धर्मोपदेश ध्यानपूर्वक सुनते रहे। महेन्दकुमार जी के शब्दों में ब्रह्मचारी जी अपने शरीर से ममत्व भाव निकाल चुके थे, उन्होंने बिना बेहोशी की दवा लिये बड़ा दुःखप्रद आपरेशन आह किये बिना ही करा लिया—आपरेशन करने वाले डाक्टर को भी अपने जीवन में यह पहला ही अनुभव हुआ"

१० फरवरी, १६४२ को प्रातः ४ बजे ब्रह्मचारी जी ने अन्तिम श्वास लिया—शरीर शांत हो गया। अन्तिम श्वांस तक वह होश में रहे, आलोचना, प्रतिक्रमण, मृत्यु-महोत्सव आदि पाठ सुनते रहे, आध्यात्मिक मनन करते रहे और आत्मानुभवानन्द के सुखसागर में गोते लगाते हुए अन्तिम श्वांस के साथ परलोक सिधार गये।

शव स्नान के उपरान्त उनका चन्दन-चर्चित शरीर हाथ की कती बुनी केसरिया रंग की खादी में अविष्टित करके, अरथी पर खुले मुंह बैठाया गया। इस अवसर पर बाबू अजित प्रसाद जी ने एकत्रित जन समूह के समक्ष ब्रह्मचारी जी का गुणानुवाद किया और अपील की कि लखनऊ के नागरिकों का कर्त्तव्य है कि ब्रह्मचारीजी के स्मारक स्वरूप एक "शीतल हौस्टल" या "शीतल छात्रालय" लखनऊ विश्वविद्यालय के निकट बनवायें।

जय-जय शब्दोच्चारण के साथ उक्त धर्मशाला से यह विशाल शव यात्रा प्रारंभ हुई और अहियागंज, नखास, चौक बाजार, मेडिकल कालेज मार्ग से होती हुई डालीगंज बाजार के अन्तिम छोर पर स्थित जैनबाग में समाप्त हुई। अनगिनत जैन स्त्री-पुरुष तथा अनेक अजैन भी नगे पैर शवयात्रा में सम्मिलित थे। रास्ते भर "जैन धर्म भूषण ब्र० शीतल प्रसाद जी की जय", "जैन धर्म की जय", "अहिंसा धर्म की जय", स्याद्वाद, अनेकान्त, कर्म सिद्धांत और मोक्ष मार्ग की जय की ध्वनियां गूंजती रहीं। दाह संस्कार जैन विधि पूर्वक ब्र० जी के भतीजे धर्मचन्द जी द्वारा किया गया। बा० अजित प्रसाद जी संस्कार विधि के पाठ पढ़ते जाते थे। दाह सस्कार के स्थान पर एक चबूतरा बना दिया गया। भारतवर्ष भर में शोक सभाऐं हुईं, दि० जैन परिषद के अधिकारियो ने दिल्ली में "शीतल सेवा मंदिर" बनाने का प्रस्ताव पारित किया, मूलचन्द किशनदास कापड़िया ने "शीतल स्मारक ग्रन्थमाला" चलाने का निर्णय किया और प० महेन्द्र कुमार न्यायाचार्य ने स्याद्वाद महाविद्यालय में "शीतल भवन" स्थापित करने का प्रस्ताव पास किया। खेद है कि इन योजनाओं में से एक भी कार्यान्वित न हो पाई। जिसके जीवन का एक-एक क्षण समाज के हित में समर्पित रहा, जो अंतिम रुग्णावस्था में भी लेख लिखाकर जैनमित्र आदि पत्रों मे

भिजवाता रहा, उसी काल में एक ग्रन्थ की रचना भी प्रारंभ कर दी जो अपूर्ण ही रह गया, और जो अन्त समय तक धर्म एवं समाज की चिन्ता करता रहा, जैन समाज के उस महान उपकारी युगपुरुष की उपरोक्त महाप्रयाण-गाथा भी शिक्षाप्रद है। वस्तुत:

एक ही शमा बुझी मौत के हाथों, लेकिन
कितनी तारीक हुई है तेरी महफिल साकी !

उपसंहार

न सर झुका के जिये हम, न मुँह छिपा के जिये,
सितमगरों की नजर से नजर मिला के जिये।
अब एक रात कम जिये तो हैरत क्या,
हम उनमें थे जो मशालें जला के जिये ॥

शायर की इस उक्ति को स्व० ब्र० शीतलप्रसाद जी ने अपने जीवन से पूर्णतया चरितार्थ कर दी थी। उन्होंने तो जीते जी अनेक मशालें जला दी थीं -अपने व्यक्तित्व से समाज के प्राय: प्रत्येक क्षेत्र को आलोकित कर दिया था। धर्म, संस्कृति और समाज के लिए उनके हृदय में जो उत्कट तड़प सदैव विद्यमान रही और उनकी सर्वतोन्मुखी उन्नति एवं प्रगति के हित में उन्होंने जो अपने जीवन का एक-एक क्षण होम दिया, ऐसा करने वाले युग-युगान्तरों में विरले ही होते हैं। उन्होंने न जाने कितनों को सन्मार्गकी प्रेरणा दी, लेखक बनाया, धर्म में आस्था दृढ़ की, समाज सेवा के व्रत में दीक्षित किया स्वयं अपने उदाहरण से पथ-प्रदर्शन भी किया। किन्तु यदि उनकी जलाई हुई मशालों को उठाने वाले धीरे-धीरे काल-कवलित हो गये या अपने उत्तरदायित्व के निर्वाह में शिथिल हो गये और शेष ने इन मशालों की उपेक्षा की, उन्हें बुझ जाने दिया, तो इसमें उस युगपुरुष का क्या दोष है ? आज महात्मा गाँधी के नाम का दम भरने वालों और उस नाम को सुनाने वालों में कितने ऐसे हैं जो महात्मा जी के सच्चे अनुयायी रह गये हैं ? स्वयं भगवान महावीर को परमात्मा के रूप में पूजने वालों में उन भगवान के सच्चे उपासक, सच्चे अनुयायी

कितने हैं ? तो यह तो प्रायः प्रत्येक महापुरुष के साथ होता आया है। इससे उनका तो कुछ बनता बिगड़ता नहीं, वह तो अपना कर्त्तव्य कर्म अपनी पूरी क्षमता के साथ करके चले गये ? किन्तु आने वाली जो पीढ़ियां उन्हें नकार देती हैं, या सच्चे मन से स्वीकार नहीं करतीं, उनके कार्यों, दिशा निर्देश एवं जीवन से प्रेरणा नहीं लेतीं, उनकी ही क्षति होती है। वे सहज सुलभ लाभ से वंचित हो जाती हैं।

प्रस्तुत पुस्तिका में स्व० ब्रह्मचारी जी के प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व एवं कृतित्व का जो संक्षिप्त परिचय देने का प्रयास किया गया है उसका मुख्य उद्देश्य यही है कि अपने इस कर्मठ उपकारी महापुरुष की स्मृति से, कार्यकलापों से, शिक्षाओं से वर्तमान एवं भावी पीढ़ियां प्रेरणा लेती रहें और ऐसे निस्वार्थ समाज - सेवी समाज में पैदा होते रहें, आगे आते रहें, जो अपने समय की परिस्थितियों एवं परिवेश में स्वधर्म में आस्था बनाये हुए समाज को प्रगति पथ पर सतत् अग्रसर करते रहें। आज समाज में धर्म, संस्कृति और समाज के ऐसे निस्वार्थ सच्चे समर्पित सेवियों एवं कार्यकर्त्ताओं की कमी अत्यधिक खटकने वाली चीज है। संभव है कि ब्रह्मचारी जी के आदर्शों से प्रेरणा लेकर इस भावना का और उसकी आवश्यकता का स्फुरण हो जाये। उनकी भाँति ऐहिक काम-भोगों से विरक्त होकर तथा शरीर की स्पृहा को छोड़कर निर्ममत्व प्राप्त करने वाले ज्ञानी-ध्यानी होना तो बहुत बड़ी बात है, किन्तु अपने-अपने स्थान पर समाज के सर्वतोमुखी उन्नयन एवं धर्म की सच्ची प्रभावना में स्वशक्त्यानुसार योग देने की भावना तो जन सामान्य में से अनेकों के हृदय में जागृत हो सकती है और उन्हें अपने कर्त्तव्य के प्रति सचेष्ट कर सकती है।

किसी ने कहा है कि " चिता पर भस्म तो सभी होते हैं, विरले हैं जो भस्म तो होते हैं मगर अगरबत्ती की तरह वातावरण को उनकी सुगंध का आभार-ऋण स्वीकार करना होता है। "तो अभी तो स्व० ब्रह्मचारी जी रूपी अगरबत्ती की महक भले ही उत्तरोत्तर क्षीण होती हुई भी, वातावरण में व्याप्त है, तथापि समाज उस सुगंध का आभार ऋण स्वीकार नहीं करें तो क्या कहा जाय ? हम ब्रह्मचारी जी का जन्म दिवस व उनकी पुण्यतिथि प्रतिवर्ष उनके आदर्शों, विचारों, ग्राह्य शिक्षाओं आदि का प्रचार करके, समाज सेवा का व्रत लेकर, उनकी प्रकाशन योग्य रचनाओं का प्रकाशन और प्रचार करके तथा उनके जीवन से प्रेरणा लेकर कर ही सकते हैं। इस प्रकार ही उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के प्रति सच्ची श्रद्धान्जलि अर्पित की जा सकती है।

यशोगाथा

अंग्रेज विचारक कोल्टन की उक्ति है कि "समसामयिक लोक व्यक्ति विशेष का मूल्यांकन उसके गुणों की अपेक्षा उसके व्यक्तित्व के आधार पर करते हैं, जबकि भावी पीढ़ियां उसके व्यक्तित्व की अपेक्षा उसके गुणों का आदर करते हैं।" कोई भी व्यक्ति केवल गुणों का ही पुंज अथवा सर्वथा निर्दोष नहीं होता। ब्रह्मचारी जी में अनेक गुण थे तो कुछ दोष भी रहे होंगे। एक समय उनके कतिपय विचारों को लेकर तीव्र विरोध भी भड़के, उनके बहिष्कार भी किये गए, उनके अनेक निन्दक भी हो गए, किन्तु जो गुणग्राही होते हैं वे व्यक्ति के दोषों पर दृष्टिपात नहीं करते, वरन् उसके गुणों, उपलब्धियों और सेवाओं के लिए उसका आदर-सम्मान करते हैं और उससे प्रेरणा लेते हैं। यही उस महान् व्यक्ति की विरासत है जिससे आने वाली सन्ततियां लाभ उठा सकती हैं, और उठाती रहेंगी। वस्तुतः ब्रह्मचारी जी के संबंध में नीचे जिन सज्जनों के विचार दिए जा रहे हैं उनमें देशी, विदेशी, जैन, जैनेतर, दिगम्बर, श्वेताम्बर, स्थितिपालक, और सुधारवादी, पंडित और बाबू विविध वर्गों के और विभिन्न स्थानों के प्रतिष्ठित प्रतिनिधि हैं। कुछ एक उनमें वय ज्येष्ठ हैं, कुछ समायु हैं, तो अनेक कनिष्ठ हैं। उनके विचारों के अवलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रह्मचारी जी के जीवन-काल में भी उनकी गुण-प्रशंसा, ख्याति, सम्मान और प्रतिष्ठा अत्यधिक रही और यह कि उनका मिशन, उनके आदर्श और विचार, उनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व तथा उनकी धर्म, संस्कृति एवं समाज के प्रति सेवायें और उपलब्धियाँ चिरकाल तक प्रेरणाप्रद बनी रहेंगी। इस संक्षिप्त यशोगाथा के आलोक में ब्रह्मचारी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का मूल्यांकन करके उससे त्यागीजन एवं समाजसेवी स्त्री पुरुष वांछित मार्ग-दर्शन प्राप्त कर सकते हैं।

महात्मा भगवानदीन

ब्रह्मचारी जी को देह मामूली मिली थी, आत्मा जबरदस्त। वे जब बोलते थे तो ऐसा मालूम होता था मानों देह नहीं, आत्मा बोल रही है। उनका स्वाभिमान अपनी रक्षा के लिए न था किन्तु जैन धर्म की रक्षा के लिए था।

बाबू सूरजभान वकील

ब्रह्मचारीजी अत्यन्त सहनशील प्रकृति के थे, अपने काम में बराबर अपनी धुन के साथ लगे रहते थे। वैसा परिश्रमी मेरे जीवन में अन्य कोई दृष्टिगोचर नहीं हुआ।

पं० जुगलकिशोर मुख्तार

अपनी सेवाओं द्वारा उन्होंने जैन समाज के ब्रह्मचारियों एवं त्यागी वर्ग के लिए कर्मठता का एक आदर्श उपस्थित किया।

बा० अजितप्रसाद वकील

ब्रह्मचारी जी ने दिगम्बर जैन समाज के हितार्थ, उत्थानार्थ और जैनधर्म के प्रचारार्थ अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। धार्मिक तथा सामाजिक कार्य के सामने वह अपने शारीरिक कष्ट या स्वास्थ्य हानि का कुछ भी ख्याल नहीं करते थे।

डा० बनारसी दास

पंजाब युनिवर्सिटी में जैन अनुशीलन का बीजारोपण ब्रह्मचारी जी ने ही किया।

डा० बेनीप्रसाद

उन्होंने अपने तमाम गुणों को उन आदर्शों की सेवा में लगा दिया जिनमें उनका पूरा विश्वास था तथा जिन पर वह दृढ़ता से संलग्न थे।

डा० विमल चरण लाहा

वह जैन धर्म के जटिल विषयों को बौद्ध तत्त्वों का उल्लेख देकर समझाने में बड़े सफल होते थे।

डॉ० सैय्यद हफीज

ब्रह्मचारी जी के व्याख्यानों ने मेरे हृदय पर गहरा प्रभाव डाला। जैन सिद्धांत का प्रशंसनीय ज्ञान, प्रतिपादन की स्पष्टता, उनका संयमी जीवन भुलाया नहीं जा सकता। वे ऐसे विरले विद्वान् थे जिन्होंने जैन शासन की आत्मा में प्रवेश करके उसे अपने दैनिक जीवन में उतारा। यह निश्चय होने पर कि श्रोता वास्तव में आध्यात्मिक सत्य का प्रेमी है, वह उसके हृदय से संदेह निवारण करने और सिद्धांत की यथार्थता और युक्ति समझाने के लिए घंटों लगा देते थे।

भदन्त आनंद कौसल्यायन

धर्म प्रचार की धुन तो ऐसी हो। उनकी दृष्टि बड़ी विशाल थी अपनी चर्या में गजब के नियम पालक थे। उनके वियोग से एक सच्चा साधु न रहा, जो अपने जैन समाज से भी लड़ सकता था और पराये समाज से भी, सत्य की खातिर और केवल सत्य की खातिर।

डॉ० ए० एन० उपाध्ये

पूज्य ब्रह्मचारी जी का यह श्लाघनीय गुण था कि वे उन पुरुषों का भी ध्यान रखते थे जिनसे की उनका मतभेद था।

डॉ० हीरालाल जैन

जैन त्यागी वर्ग में ब्रह्मचारी जी सदृश विद्वान, उद्योगी, धर्म तथा समाज सेवा में निःस्वार्थ रूप से तन्मय दूसरा व्यक्ति अभी तक दिखाई नहीं दिया।

डॉ० कामता प्रसाद जैन

वह ओतप्रोत धर्ममय थे। उनमें राष्ट्र-धर्म भी था, समाज धर्म भी था और आत्मधर्म भी था। जैनधर्म के प्रचार की भावना उनके रोम-रोम में समाई थी।

पं० माणिक्यचन्द्र कौन्देय न्यायाचार्य

बीसवीं शती के महान नर-रत्नों में ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी भी गणनीय नरपुंगव हो गये हैं। जैनधर्म और जैन जाति का उत्थान करने में वह जीवन पर्यन्त सन्नियोग से संलग्न रहें - ज्ञान और चरित्र को बढ़ाना उनका नैसर्गिक काम था। कुरीति-निवारणार्थ व्याख्यान करते

व्याख्यान करते हुए दुख से रो पड़ते थे। ऐसे कर्मशूर सतत् जिनधर्म प्रभावनारत महान् पुरुष अब कहां हैं।

पं० महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य

ब्रह्मचारी जी जैन धर्म व जैन समाज की सर्वतोमुखी उन्नति में जीवन का एक-एक क्षण लगाते थे।

पं० चैनसुखदास न्यायतीर्थ

जैन समाज के उत्थान के पुनीत कार्य में उन्होंने अपने को खपा दिया। उनकी दिनचर्या सचमुच ही अनुकरणीय थी।

पं० परमेष्ठीदास न्यायतीर्थ

जैन समाज का ऐसा निःस्वार्थ हितचिन्तक मैंने आज तक नहीं देखा। समाज के लिये रोनेवाला वैसा महान् कर्मयोगी इस शती में अन्य नहीं हुआ।

ब० पंडिता चन्दाबाई

आरा में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के समय चालीस हजार रुपये का ध्रौव्य-कोष बाला-विश्राम के लिए ब्रह्मचारी जी की प्रेरणा से हो गया, जो अब करीब एक लाख का है। उसका श्रेय उन्हीं को है: वे जहां भी जाते शास्त्र भंडारों की व्यवस्था कराते थे।

महिलारत्न ललिताबाई

"हमको और हमारी जैसी विधवाओं को सन्मार्ग में लगाने वाले, हम लोगों का जीवन सुधारने वाले आज इस लोक में नहीं रहे।"

के० बी० जिनराज हेगड़े

उनकी सरल वृत्ति और संयमी जीवन समस्त सार्वजनिक कार्य-कर्त्ताओं के लिये उदाहरण है। इस भौतिक युग में वे जैनों और उनके धर्म के लिए जिये।

सर सेठ हुकुमचन्द

ब्रह्मचारी जी जैनधर्म के सच्चे महात्मा थे, धर्म की वे एक सजीव मूर्ति थे। उनकी धार्मिक निष्ठा और लगन के कारण हमारी उन पर महान् श्रद्धा थी, और हम उनके प्रति बहुत पूज्य बुद्धि रखते थे। जो काम आचार्य समन्तभद्र ने किया था वैसा ही काम ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी ने किया।

रा० ब० लालचन्द्र सेठी

उनमें जैनधर्म के विश्वव्यापी प्रचार की विशेष भावना थी।

रा० ब० लाला हुलासराय

त्यागी होकर इतने परिश्रमी, विद्वान, लेखक, अध्यात्मरसिक, व्याख्याता, टीकाकार होना अति दुर्लभ है।

सेठ बैजनाथ सरावगी

बंगाल-बिहार उड़ीसा में रहने वाले "सराक" कहलाने वालों को श्रावकाचार में प्रवृत्त कराने में ब्रह्मचारी जी अग्रेसर रहे।

श्री विश्वम्भरदास गार्गीय

वे जैन समाज के आदर्श कार्यकर्त्ता, आदर्शत्यागी चरित्रवान थे उनके कार्यों से किसी दूसरे की उपमा नहीं दी जा सकती। उन्होंने अनेकों को विधर्मी होने से बचा लिया, अनेकों को सन्मार्ग पर लगा दिया।

बाबू छोटेलाल सरावगी

ब्रह्मचारी जी ने कलकत्ते के कई जैन परिवारों को जो काली-देवी या शिवजी के उपासक बन गए थे, जैनधर्म का दृढ़ श्रद्धालु बना दिया। वे आदर्श त्यागी, धर्मात्मा और महात्मा थे । जैन जाति पर ब्रह्मचारी जी का ऋण इतना बड़ा है कि उससे उऋण होना असंभव है ।

ला० कपूरचन्द्र जैन

वैष्णव संबंधों के कारण धीरे-धीरे हम लोग जैन धर्म से विमुख होते गए । ब्रह्मचारी जी ने हमको पक्का श्रद्धानी बना दिया और परिवार में जैन धर्म की नींव दृढ़ कर दी तथा हमारे मकान में पार्श्वनाथ चैत्यालय स्थापित करा दिया । उनका सदैव उपदेश था कि खूब दान किया करो और दान देकर खुश हुआ करो ।

सेठ गुलाबचन्द्र टोंग्या

हममें जैनदर्शन का अध्ययन करने की लगन ब्रह्मचारी जी के प्रभाव से जागृत हुई और उन्हीं की प्रेरणा से गम्भीरमल इंडस्ट्रियल स्कूल (इन्दौर) स्थापित किया गया ।

बा० लालचन्द्र जैन एडवोकेट

मेरे जीवन पर और रोहतक के दूसरे भाइयों के जीवन पर जो प्रभाव पूज्य ब्रह्मचारी जी का पड़ा है और उससे जितना लाभ हम सबको हुआ है, उसका वर्णन करना बहुत कठिन है ।

साहू शान्तिप्रसाद जैन

उन्होने जैन समाज को जीवन देने के लिए स्वयं अपने जीवन की और उससे भी अधिक अपने जीवनोपार्जित यश की बलि चढ़ा दी।

बा० रतनलाल वकील

ब्रह्मचारी जी ने मान व अपमान के द्वार में से निकलकर जैन समाज को सहिष्णुता का पाठ पढ़ाया ।

बा० मानकचन्द्र एडवोकेट

उनके उपदेश के कारण मेरी धर्म में रुचि हो गई।

चौ० जयचन्द्र

वह धर्म प्रचारक थे पर राष्ट्रीयता से ओतप्रोत थे, जल्दी से जल्दी भारत को स्वतन्त्र देखना चाहते थे।

श्री जगत प्रसाद सी. आई. ई.

उनकी समयसार की टीका ने मेरी बहुत सी शकाओं और कठिनाइयों को हटा दिया। मैं ब्रह्मचारी जी को अपना आत्मगुरु मानता हूं।

पं० राजेन्द्र कुमार न्यायतीर्थ

पिछले ५० वर्ष में समाज में जो भी प्रगति हुई है या यों कहिए कि शिक्षा, साहित्य निर्माण, धर्म प्रचार के संबंध मे जो कार्य हुए हैं, उनमें स्व० ब्रह्मचारी जी का ऊचा स्थान है।

लाला राजेन्द्रकुमार जैन

ब्र० जी की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। इस युग के समाज निर्माण तथा उसके सभी क्षेत्रों में ब्र० जी की प्रमुख साधना और व्यापक कार्यवृत्ति थी। वीरपूजा वीरो का भूषण है। उनके पावन सस्मरण समाज के नवयुवकों मे नवस्फूर्ति के भाव भरेंगे।

रा. ब. सेठ हीरालाल

वह महान साधु थे। उनके संपूर्ण जीवन का एक ही उपदेश था आत्मोन्नति के साथ धर्म और समाज की सेवा करना। उन्होंने समूचे भारतवर्ष में भ्रमण कर अपने उपदेशों के द्वारा मानव जाति का अकथनीय कल्याण किया है। आज हम लोग जो कुछ भी उन्नति कर सके हैं, उसमें अधिकांश श्रेय ब्रह्मचारी जी को ही है। इसके लिए समाज की संतान उनकी सदैव ऋणी रहेगी। एक-एक मिनट का सदुपयोग उनकी प्रकृति में शामिल हो गया था। जैन इतिहास में उनका नाम हमेशा स्मरण किया जायेगा।

साहू श्रेयांस प्रसाद जैन

वह आत्मद्रष्टा थे, अपने कर्त्तव्य का मार्ग अन्तरात्मा के आलोक द्वारा देखते थे, और युग की पुकार के स्वर अन्तरात्मा की वीणा पर

चुकते थे। उन्होंने इस आत्मदर्शन को सदा ही ज्ञान द्वारा पुष्ट और शरीर द्वारा सफल किया।

उपाध्याय मुनि श्री विद्यानंद जी

मैंने ब्र० जी को प्रत्यक्ष देखा नहीं, पर मैंने उनके १५ ग्रंथों को देखा जिनका उन्होंने संपादन किया। वह बहुत अद्‌भुत है। उनके संपादन में मुझे अत्यन्त प्रमाणिक अर्थ देखने को मिला। उन्होंने स्वेच्छा से कुछ परिवर्तन नहीं किया। वास्तव में ब्र० जी सिद्धहस्त लेखक थे। वे कलम के धनी थे। रेल में सफर करते हुए भी वे लिखा करते थे। शीतल प्रसाद जी एक क्रान्तिकारी थे। उनका समाज पर बहुत उपकार है। भारत में वे अनेक स्थानों पर गए और प्राचीन शिला-लेखों की खोज करते रहे। उनकी पुस्तकों को पढ़कर मैं भी वहां जाता रहा। जब ब्र० जी बीमार हो गए तो रूढ़िवादी पंडित जी ने उन्हें धर्म सुनाने से इन्कार कर दिया। धर्म सुनाने के लिए उन्होंने यह शर्त रखी कि ब्रहमचारी जी को अपनी कोई मान्यता को छोड़ना होगा। क्या जीवंधर ने कुत्ते को मरते समय णमोकार मंत्र सुनाने से पहले कोई शर्त रखी थी? यह सब रूढ़िवादिता है। हम तो आत्मवादी हैं, अनात्मवादी नहीं। हमने समयसार ग्रंथ पर पिछले दिनों सभी उपलब्ध टीकाएँ देखीं, परन्तु सबसे अधिक प्रमाणिक टीका ब्र० शीतलप्रसाद जी की मिली।

श्री अगरचन्द नाहटा

ब्र० जी का अध्ययन और लेखन बहुत विशाल था। धुन के धनी ब्र० शीतल प्रसाद जी जैन धर्म के महान सेवक, प्रचारक एवं लेखक थे। उनके उल्लेखनीय-कार्यों और ग्रंथों में एक है—प्राचीन जैन स्मारक, ५ भाग। अपने ढंग का यह पहला और एक ही कार्य था। ब्र० जी ने इन पांच भागों को तैयार करने में कितना समय लगाया और कितना अधिक श्रम किया है, इसे कोई भुक्तभोगी लेखक ही जान सकता है। ऐसे महत्वपूर्ण ग्रंथ तैयार करना उन जैसे महान् परिश्रमी और धुन के धनी व्यक्ति के लिए ही संभव है। जैन समाज के सैकड़ों लेखकों में से किसी ने भी ऐसा और इतना बड़ा काम नहीं किया। इस ग्रंथ

को तैयार करते समय जब उन्हें बंगाल, बिहार, उड़ीसा में जो "सराक" नामक जैनजाति है, उसका पता चला तो उस जातिवालों के निवास स्थानों में स्वयं पहुंचकर धर्मप्रचार किया। सन् १९३४ के ११ मार्च से ४ अप्रेल तक उड़ीसा के सराकों के गांव-गांव में बड़ी कठिनाई से पहुंचकर धर्मप्रचार किया था। उस धर्मप्रचार की इस धर्मयात्रा का विवरण कटक के बाबा चन्दनलाल कन्हैयालाल ने २४ पृष्ठों की पुस्तिका में प्रकाशित कराया था।

पं कैलाशचन्द्र शास्त्री

समाज को गति प्रदान करने वाले ही युगपुरुष कहे जाते हैं- ऐसे युगपुरुषों में से ब्र० शीतलप्रसाद जी भी थे। हमने उनका वह समय देखा है जब उनके नाम की तूती बोलती थी। उस समय समाज में त्यागी अत्यन्त बिरले थे। एक ऐलक पन्नालाल जी का नाम सुनने में आता था, मुनि तो केवल शास्त्रों में थे। हमने तो अपने बचपन से तीन को ही सुना, जाना और देखा-एक ब्र० शीतलप्रसादजी, दूसरे बाबा भागीरथ जी वर्णी और तीसरे श्री पं० गणशप्रसाद वर्णी। किन्तु इन तीनों में भी उस समय समाज विश्रुत थे ब्र० शीतलप्रसाद जी। समाज में उत्तर से दक्षिण तक शायद ही कोई समारोह हो जिसमें वह न पहुँचते हों। चातुर्मास में एक स्थान पर रहने के पश्चात आठ माह वह भ्रमण करते थे। मोरैना में जब हम पढ़ते थे तो महाविद्यालय के महोत्सव में समस्त अथितियों का स्वागत करते हुए पं० देवकीनदन जी ने कहा था कि जैन समाज के वर्तमान "विद्याधर" भी यहीं उपस्थित हैं। सचमुच में ब्र० जी विद्याधर थे। उनका पैर रेल में रहता था। रेल में बैठते ही उनका जूट का बोरा खुल जाता था और वह अपने लिखने-पढ़ने में लगजाते थे। वह खाली बैठना नहीं जानते थे। न उन्हें गप्पबाजी में रस था। व्यर्थ की बातचीत नहीं करते थे। उन्हें एक ही धुन थी - सेवा की। वह भी थी दि० जैन समाज और दि० जैन धर्म की। वह कट्टर दिगम्बर जैन थे। न मालूम कितने घरानों और व्यक्तियों को ब्रह्मचारी जी ने अपने सदुपदेश से जैन धर्म की ओर आकृष्ट किया। जैनसमाज के प्रचार-प्रसार और प्रगति का ऐसा कोई काम नहीं था जिसमें उनका योगदान न रहा हो। इसके लिए वे किसी आमंत्रण की अपेक्षा नहीं करते थे - "मान न मान मैं तेरा मेहमान" यही उनका आदर्श था। वह समयसार के रसिया थे और अपने आचार

के बड़े पक्के थे। "जैन मित्र" के संपादक थे, उसे पाक्षिक से साप्ताहिक उन्होंने ही बनाया। वे स्याद्वाद महाविद्यालय के अधिष्ठाता थे। उनके संरक्षण-संवर्धन में उनका बड़ा योगदान रहा है। वह जहाँ भी जाते थे, आहार करने के पहले आहारदाता से अपने छात्रों के लिए भोजन मांग लेते थे। विद्यालय से उन्हें बड़ा अनुराग था। जब वह सामाजिक कारणों से विद्यालय से पृथक हो गए तब भी वह उस अनुराग से मुक्त नहीं हो सके और विद्यालय में बराबर आते रहे। वह जब भी आते थे मुझसे यह कहना नहीं भूलते थे कि किसी भी लोभ में पड़कर मैं विद्यालय न छोड़ूं। बम्बई के सेठ माणिकचन्द्र जी के वह दाहिना हाथ थे। उनके साथ उन्होंने बहुत कार्य किया और समाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता ही नहीं नेता बने। उन्होंने अपने जीवन में समाज और धर्म की जो सेवा की उसका दूसरा उदाहरण आज नहीं मिलता।

पं० नाथूलाल शास्त्री

जो महान् व्यक्ति होते हैं वे वज्र से भी कठोर होते हैं और फूल से भी अधिक कोमल होते हैं। ब्र० शीतलप्रसाद जी ऐसे ही महान पुरुष थे। उनके ७७ ग्रंथों में से ४५ ग्रंथ अध्यात्म पर है, सभी ग्रंथ विवेक से लिखे गए हैं। हर चातुर्मास में एक ग्रंथ छपता था। वे जैनमित्र, जैन गजट तथा वीर के संपादक रहे। जितने जैन बोर्डिंग आज खुले हुए है व सर सेठ हुकमचन्द्र पारमार्थिक संस्था को दान मिला है, उसके पीछे पू० ब्र० शीतलप्रसाद जी की प्रेरणा थी।

श्री अक्षय कुमार

महापुरुष ५० वर्ष आगे की बात सोचते हैं और यही कारण है कि ब्र० जी ने ५० वर्ष बाद जो स्थिति आने वाली थी उसको देखते हुए समाज का मार्ग दर्शन किया। इसी कारण वे आज समाज के प्रेरणा स्रोत हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि उनके मार्ग पर चलते हुए समस्या का समाधान खोजें।

सेठ मूलचन्द्र किशनदास कापड़िया

जो कुछ सेवा हम अपने पत्रों या प्रेस द्वारा कर सके हैं उसका श्रेय स्व० ब्रह्मचारी जी को ही है।

श्री रमाकान्त जैन

"तीर्थंकर" पत्र के जैन पत्र पत्रिकाएं विशेषांक के लिए लेख लिखने के सिलसिले में जब एक भूले-बिसरे पत्र "सनातन जैन" की पुरानी फाइल पलट रहा था तो ज्ञात हुआ कि पतितोद्धारक ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी ने सन् १९२८ के लगभग तीर्थंकर प्रणीत सनातन जैनधर्म का सर्वत्र प्रचार तथा समयानुकूल समाजोन्नति का प्रयत्न करने, अर्थात (१) अजैनो का जैनधर्म में दीक्षित करने और जातिच्युत जैनों की शास्त्रोक्त शुद्धि करने, (२) बाल, वृद्ध और अनमेल विवाहों तथा प्रचलित सामाजिक कुरीतियों का निषेध करने, (३) पारस्परिक प्रेम-भाव की वृद्धि तथा अन्तर्जातीय विवाह आदि संबंध का प्रचार करने, (४) प्रत्येक स्त्री-पुरुष को ब्रह्मचर्य व्रत पालने की प्रेरणा करने किन्तु यथोचित शील व्रत पालने में असमर्थ विधवाओं के लिए पुनर्लग्न की प्रथा का प्रचार करने तथा (५) पुनर्विवाह करने वाले स्त्री-पुरुषो के धार्मिक और सामाजिक स्वत्वों की रक्षा करने के उद्देश्य से सनातन जैन समाज की स्थापना की थी और अपने इन उद्देश्यों की पूर्ति और प्रचार हेतु वर्धा से हिन्दी में 'सनातन जैन" नाम से मासिक पत्र निकाला था, जो बाद में बुलन्दशहर में बा० मंगतराय जैन (साधु) द्वारा १९५० ई० तक प्रकाशित किया जाता रहा। ब्रह्मचारी जी की प्रेरणा से अकोला आदि में विधवाश्रमों की स्थापना भी हुई।

बा० मंगतराय जैन "साधु"

यह सत्य है कि समाज सुधारकों की कद्र उनके जीवनकाल में न होकर उनके पश्चात होती है, किन्तु जैन समाज ने ऐसा नहीं किया। अत हम कृतघ्न न होकर कृतज्ञ बनें और ब्रह्मचारी जी के स्मारक सनातन जैन समाज को चिरस्थायी रखें।

डा० नेमीचन्द्र जैन सं० तीर्थंकर

वे जैन समाज के राजा राममोहन राय ही थे। उनकी सुधारवादी चेतना अत्यन्त प्रखर थी। "जैनमित्र" के संपादन में उनकी इस राज-नीति का प्रतिबिम्ब मिलता है।

श्री ऋषभचरण जैन

नंगे बदन रहते हैं। इन्टर या थर्ड में होंगे। यह उनका फोटो रहा। सांवला सा रंग है। जरा-जरा कुछ मुस्कराते से, खूब मीठे-मीठे से व्यक्ति हैं। हजारीलाल जी तो तुम्हारे साथ हैं ही। उन्हें बहुत सत्कार पूर्वक लाना।

सन् १९२४-२५ की बात है। हरदोई में ब्रह्मचारी जी आने वाले थे बाबूजी (बै० चम्पतराय जी) ने उन्हें बुलाया था हमारी और मुंशी हजारीलाल जी की ड्यूटी उन्हें स्टेशन पर "रिसीव" करने की थी। बाबूजी के उपरोक्त शब्दों में ही हमने ब्रह्मचारी जी का प्रथम परिचय पाया। कुछ ही दिन पहिले ब्रह्मचारी जी समाज सुधार संबंधी घोषणा कर चुके थे। और इस घोषणा ने जैन-समाज के ऊपर वज्रपात का सा कार्य किया था।

"जैन मित्र" और "दिगम्बर जैन" में ब्रह्मचारी जी के लेख हमने पढ़े थे। बिलकुल एक बालक का सा कौतूहल मुझे ब्रह्मचारी जी में मिला, अपना यह कौतूहल मैंने बाबूजी पर प्रकट भी कर दिया था तथा उनसे वादा भी ले लिया था कि वे एक दिन ब्रह्मचारी जी के दर्शन मुझे करायेंगे। यह उस कहे हुए की पूर्ति थी।

"जैन समाज" के छः - सात नाम बाबू जी के मुख से अक्सर निकलते थे। ये नाम थे, ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी, बाबू देवेन्द्रकुमार आरा वाले, बाबू रतनलाल (वकील), लाला राजेन्द्रकुमार (बिजनौर वाले) बाबू अजितप्रसाद (एडवोकेट) लखनऊ, बाबू कामता प्रसाद (एटा) और बाबू मूलचन्द किशनदास कापड़िया। ब्रह्मचारी जी का नाम वास्तव में सबसे अधिक बार उनकी जबान पर आता था। आज ये मेरे जीवन के अमिट भाग बन गये हैं, जिन्हें मैं कभी भुलाए नहीं भूल सकता, और इनमें से ब्रह्मचारी जी का संस्मरण लिखने का अवसर पाकर मुझे अत्यन्त आनन्द प्राप्त हुआ है।

बिलकुल ठीक उपरोक्त नख-शिख के ब्रह्मचारी जी थे। मेरी प्रकृति में आरम्भ से ही एक खास तरह की सयुक्त प्रांतीय ऐंठ है। मैंने अपने जीवन में बाबू जी के अतिरिक्त और किसी के पैर नहीं

छुये परन्तु ब्रह्मचारी जी के पैर मुझे छूने पड़े। मैंने अपने अहंकार वश बहुत कम आदमियों को अपने से बड़ा माना लेकिन ब्रह्मचारी जी को मैं मन ही मन सदा बहुत बड़ा मानता रहा।

बाबू जी के प्रेरक कुछ हद तक ब्रह्मचारी जी थे और ब्रह्मचारी जी की प्रेरक थी वह उत्कृष्ट आत्मा जिसकी सत्ता में हमें एकनिष्ठ विश्वास है।

ब्रह्मचारी जी कई दिन हरदोई में रहे। ब्रह्मचारी जी और बाबू जी दोनों ही महापुरुष थे। परन्तु एक प्रतिमाधारी था और दूसरा केवल एक अणुव्रती गृहस्थ। यह २५ या २६ सन् की बात है। बाबू जी का जीवन करीब १० वर्ष हुए, बदल चुका था। उन्होंने अपने व्यस्त जीवन में से भी समय निकाल कर जैनधर्म सम्बन्धी बहुत से ग्रन्थ रच डाले थे। दिगम्बर जैन परिषद की बुनियाद पड़ चुकी थी और दि० जैन महासभा के कुछ सज्जन बाबू जी की अप्रिय आलोचना कर रहे थे। बाबू जी में नीतिमत्ता कुछ कम थी। वे अपनी बात सदा ओजस्वी और बहुत सीधे ढंग पर कह देते थे। महासभा के साथ अपने मतभेद को भी इसी ओजस्वी और सीधे ढंग पर उन्होंने प्रकट कर दिया था। ब्रह्मचारी जी के साथ उनकी गाढ़ी मैत्री थी। दोनों में बहुत सी और बहुत लम्बी-लम्बी बातें हुई। कुछ इधर-उधर और कुछ मेरे सामने। मुझे ब्रह्मचारी जी के समक्ष बाबू जी भी कुछ हलके-हलके लगने लगे।

ब्रह्मचारी जी की वह सूरत हमारे मन में घर कर गयी। वे बरामदे में काठ के तख्त पर सोते थे और बहुत तड़के उठते थे। दिन में एक ही बार भोजन करते थे और भोजन करते समय मौन रहते थे। वैसे तो बाबू जी का भोजन भी बहुत पवित्रता पूर्वक तैयार होता था, किन्तु ब्रह्मचारी जी का भोजन विशेष तत्परता के साथ बनता था। मुझे याद है कि ब्र० जी के लिये स्वयं हमारी माताजी भोजन बनाती थीं और ब्र० जी को मेज कुर्सी पर न लाकर उन्हें चौके में भोजन कराते थे। उनका व्यवहार अभ्यागतों से लगाकर नौकरों चाकरों तक से ममता भरा था।

बाबूजी के साथ जो-जो बातें मेरे सामने होती थी मैं उन्हें बड़े ध्यान से सुनता था। समाज-सुधार और अन्तर्जातीय विवाह सम्बन्धी उनके विचार तो प्रकाश में आ ही चुके थे, परन्तु नारी जाति के सर्वांगीण उत्थान पर उनकी धारणाएं अत्यन्त प्रभावशाली और प्रखर थीं।

प्रत्येक आदमी के भीतर एक दूसरा आदमी रहता है, ऊपर का आदमी अक्सर परिस्थितियों का शिकार बन कर कुछ ऐसे कार्य करता है जो उसके आदर्शों के ही नहीं, उसकी अन्तरात्मा के भी सर्वथा विपरीत होते हैं। परन्तु अन्दर का आदमी सदा अपने मार्ग पर अग्रसर रहता है। हमारी सम्मति में वे ही गृहस्थ सच्चे गृहस्थ हैं जो कम से कम व्यक्तिगत जीवन में अन्तरात्मा की आवाज के साथ चलते हैं, परन्तु साधु का अन्दर का और बाहर का व्यवहार सर्वथा समान होना चाहिए। ब्रह्मचारी जी मेरी दृष्टि में एक सच्चे साधु इसलिये थे कि उन्होंने अन्तरात्मा की आवाज को स्पष्टतः पूर्वक संसार पर प्रकट कर दिया है।

उन्हें न नेतृत्व की चाह थी और न कोई सांसारिक मोह था। वे एक सर्वथा वैराग्यमय पुरुष थे। जिन्होंने अपना जीवन जैन जाति के अभ्युत्थान में न्यौछावर कर दिया था और जिनका तप तथा त्याग अवश्य एक दिन संसार में अपना रंग लाकर रहेगा।

श्री अक्षयकुमार जैन

सन् १९२३ में दिगम्बर जैन परिषद् की स्थापना हुई, मेरे पूज्य पिताजी श्री दीवान रूपकिशोर जैन परिषद् की स्थापना के समय दिल्ली में उपस्थित थे और वे भी परिषद के एक संस्थापक थे। वहां वह स्वनामधन्य ब्र० श्री शीतलप्रसाद जी के संपर्क में आए और उनके प्रगतिशील विचारों से प्रेरित हुए। परिणाम यह निकला कि २ वर्ष बाद ८ दिसम्बर, १९२५ को मेरी बड़ी बहिन श्रीमती शांतिदेवी (अब स्वर्गीय) का विवाह ब्रह्मचारी जी के सद्परामर्श से इन्दौर के सुप्रसिद्ध नेता बाबू सूरजमल जैन के मुँह बोले भाई श्री नेमीचन्द्र जैन के साथ सम्पन्न हुआ। उस समय जैनों में अन्तर्जातीय विवाह का चलन था ही नहीं। स्थितिपालक वर्ग उनका कड़ा विरोध भी करता था। इस प्रकार वह विवाह दो भिन्न जातियों में हुए विवाहों में

पहला माना जा सकता है। हम लोग गंगेरवाल जैन जाति के हैं और मेरे बहनोई श्री नेमीचन्द्र जी जैन पोरवाल जाति के थे। बहिन के विवाह के अवसर पर मैं १० वर्ष का बालक था। किन्तु मुझे अच्छी तरह याद है कि हमारे गांव विजयगढ़ में ब्रह्मचारी जी हमारी हवेली के किस भाग में ठहरे थे और विवाह के अवसर पर एकत्र व्यक्तियों को ब्रह्मचारी जी ने किस प्रकार से अपने प्रगतिशील विचारों से प्रेरित किया था। छोटा होते हुए भी ब्र० जी के विचारों से मैं इतना प्रभावित हुआ था कि उन्हें विदा देने के लिए मैं अलीगढ़ तक गया था और उनके जाने का मुझे बहुत दुख हुआ था। यह वह समय था जब जैन समाज छोटे दायरे में से निकल कर बड़े दायरे में जा रहा था। अन्तर्जातीय विवाह का चलन तथा मरण भोज, दस्सा पूजा अधिकार, बाल विवाह आदि कुरीतियों को दूर करने की दिशा में प्रयत्न प्रारम्भ हो रहा था। उन सबके पीछे ब्रह्मचारी जी का प्रयास ही था। १९३३ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय चला गया था। ब्र० जी का वहां दो बार आगमन हुआ। एक बार हम जैन नवयुवकों को उन्होंने प्रो० आर एस० जैन के घर सम्बोधित किया और दूसरी बार विश्वविद्यालय के शिवाजी हाल में सभी छात्रों के सामने उनका प्रवचन हुआ। बाल स्वभाव जैसा होता है, कुछ विद्यार्थियों ने यह सोचते हुए कि यह साधु अंग्रेजी में क्या बोलेगा ? उनसे अंग्रेजी में भाषण करने की प्रार्थना की और बाद में यह देखकर सभी चमत्कृत रह गए कि ब्रह्मचारी जी ने सरल-सुबोध भाषा में अहिंसा अपरिग्रह और अनेकांत की व्याख्या की। फिर तो जैन-जैनेतर दोनों नवयुवकों का समुदाय उनका भक्त हो गया।

वह अपने समय में लब्ध प्रतिष्ठित पत्रकारों में थे। जैन साहित्य को उनकी देन अद्वितीय है। साथ ही इतिहास के वे अच्छे प्रणेता थे। और उन्होंने लुप्त साहित्य और संस्कृति को प्रकाश में लाने का भागीरथ प्रयत्न किया था। सबसे अधिक आश्चर्य की बात तो यह है कि उस जमाने में परतंत्र देश में ऐसा स्वतंत्र—राष्ट्रप्रेमी और समाज को आगे ले चलने वाला व्यक्ति जैन समाज में हुआ, जिसकी उस समय कल्पना तक करना कठिन था। ब्रह्मचारी जी की स्मृति को मेरे विनम्र प्रणाम।

पं० अयोध्या प्रसाद गोयलीय

जैन धर्म के प्रति इतनी गहरी श्रद्धा, उसके प्रसार और प्रभावना के लिए इतना दृढ़ प्रतिज्ञ, समाज की स्थिति से व्यथित होकर भारत के इस सिरे से उस सिरे तक भूख और प्यास की असह्य वेदना को बस में किए रात दिन जिसने इतना भ्रमण किया हो, भारत में क्या कोई दूसरा व्यक्ति मिलेगा ? (रेलयात्रा में) वही धकापेल वाला थर्ड क्लास' उसी में तीन-तीन वक्त सामायिक, प्रतिक्रमण । उसी में जैन मित्रादि के लिए संपादकीय लेख, पत्रोत्तर, पठन-पाठन अविराम गति से चलता था, मार्ग में अष्टमी, चतुर्दशी आई तो भी उपवास, और पारणा के दिन निश्चित स्थान पर न पहुँच सके तो भी उपवास, और २-३ रोज के उपवासी जब संध्या को यथास्थान पहुंचे तो पूर्व सूचना के अनुसार सभा का आयोजन, व्याख्यान, तत्वचर्चा । न जाने ब्रह्मचारी जी किस धातु के बने हुए थे कि थकान और भूख प्यास का आभास तक उनके चेहरे पर दिखाई न देता था । विरोध की जबरदस्त आंधी के दिनों में विरोधियों ने सर्वत्र नारे लगाये शीतलप्रसाद को ब्रह्मचारी न कहा जाय, उसे आहार न दिया जाय, उसको धर्मस्थानों में न घुसने दिया जाय, उसे जैन संस्थाओं से निकाल दिया जाय, उसके व्याख्यान न होने दिए जांये, उसके लिखने और बोलने के सब साधन समाप्त कर दिये जायें । पर ब्रह्मचारी जी अविचलित रहे । पानीपत की (सन् २८ या २६ की) ऋषभ जयन्ती जैसी कई घटनाएं दृष्टान्त हैं । सन् ४० में रुग्णावस्था में रोहतक से दिल्ली होते हुए लखनऊ जाने लगे तो बोले 'गोयलीय' हमारा जमाना समाप्त हुआ, अब तुम लोगों का युग है । कुछ कर सको तो कर लो, समाज सेवा जितनी अधिक बन सके कर लो, मनुष्य जन्म बार बार नहीं मिलने का ।

वीर राजेन्द्र कुमार जैन मेरठ

संसार में अनेक मनुष्य प्रतिदिन जन्म लेते हैं और मर जाते हैं पर उनको कोई याद करने वाला नहीं होता, पर कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनकी याद बराबर बनी रहती है । वे युग को अपने साथ

नहीं चलने देते बल्कि युग को अपने साथ लेकर चलते हैं । ऐसे ही महापुरुष थे महान कर्मयोगी ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी । वे दिगम्बर जैन समाज के गौरव थे ।

ब्रह्मचारी जी की विशेषता थी कि वे समाज सेवा व जैनधर्म के प्रचारार्थ हर समय तत्पर रहते थे । उन्हें आध्यात्मिक विषयों के प्रति गहरी रुचि थी । विधवा-विवाह का समर्थन करके उन्होंने अपनी निर्भीकता का परिचय दिया । अनेक महत्वपूर्ण व सामयिक विषयों पर अपने विचार व्यक्त किये । स्वतंत्रता का व्यवहारिक दृष्टि से लक्षण बताते हुए उन्होंने लिखा था कि 'जिस देश के निवासियों को अपनी हर प्रकार की उन्नति करने में, साम्प्रदायिक ज्ञान सम्पन्न होने में, व्यापार उद्योग वृद्धि करने में, दरिद्रता के निवारण में, स्वप्रतिष्ठा को अन्य देशों के सामने स्थापित रखने में, सर्वनागरिक हकों के भोग करने में, अपनी राज्य पद्धति को समयानुसार उन्नतिकारक नियमों के साथ परिवर्तन करने में, कोई विघ्न-बाधा नहीं है, वहां स्वतंत्रता का राज्य है । आध्यात्मिक दृष्टि से जिस आत्मा में अपने आत्मिक गुणों के विकास करने में, उनका सच्चा स्वाद लेने में उनकी स्वाभाविक अवस्था के विकास करने में कोई पर वस्तु के द्वारा विघ्न-बाधा नहीं है, वहां स्वतंत्रता का सौन्दर्य है । स्वतन्त्रता आभूषण है, परतन्त्रता अंधकार है । स्वतंत्रता मोक्षधाम है । परतन्त्रता संसार है । यह जीव राग-द्वेष मोह के वशीभूत होकर आप ही परतंत्र हो रहा है । परतंत्र होकर रात-दिन चिंतातुर रहता है । तृष्णा की दाह में जलता है । बार बार जन्म-मरण के कष्ट सहता है । यदि वह अपने बल को सम्हाले, अपने स्वभाव को देखे अपने गुणों की श्रद्धा करे, अपने भीतर छिपे हुए ईश्वरत्व को, सिद्धत्व को, परमात्मतत्व को पहचाने कि मैं आत्मा हूं, मैं निराला हूं अपनी अनन्त ज्ञान-दर्शन सुख वीर्यादि संपत्ति का स्वयं भोगता हूं, तो इस प्रकार सोचने और अनुभव करने से स्वतंत्रता का भाव झलक जाता है ।

ब्रह्मचारी जी ने कहा है कि 'अहिंसा वीरों का धर्म है, धैर्यवानों का धर्म है, यही जगत की रक्षा करने वाली है । भारत की गुलामी

का कारण अहिंसा नहीं बल्कि हिन्दू राजाओं के भीतर परस्पर फूट का होना है।

जब तक इस धरती पर जिस शासन का झंडा लहराता रहेगा ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी का नाम दिगम्बर जैन समाज के लिए सदैव गौरव का विषय बना रहेगा मेरे पूज्य बाबा जी स्व० बाबू ऋषभदास जी वकील ब्रहमचारी जी के विचारों के कट्टर समर्थक थे। वे स्वयं भी अपने समय में प्रसिद्ध लेखकों में गिने जाते थे। जिस समय ब्रहमचारी जी ने विधवा विवाह का समर्थन किया था मेरे बाबा जी ने उनके विचारों का खुलकर समाज में समर्थन किया था। हालांकि विद्वत समाज में से अधिकांश ने ब्रहमचारी जी के इन विचारों का विरोध किया।

॥ ॐ नमः श्री वर्धमानाय ॥

श्रद्धेय पूज्य ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी के प्रति

संस्मरणात्मक श्रद्धांजलि

लेखक :- श्रीमंत समाज भूषण सेठ भगवानदास जैन, सागर म. प्र.

"धर्म-धुरंधर, धर्मवीर अरु धर्म ध्यान के धारी ।
सम्यग् दर्शन-ज्ञान-चरित्र से शिव-पद के अधिकारी ॥

जैन धर्म भूषण, धर्म दिवाकर श्रद्धेय ब्रह्० शीतलप्रसाद जी धार्मिक साहित्य के मूर्धन्य विद्वान, साहित्यकार, रचनाकार, टीकाकार, ओजस्वी वक्ता, लेखक, सफल संपादक और दिगम्बर जैन परिषद के संस्थापक, समाज सुधारक तथा समाज में व्याप्त रूढ़ियों के उन्मूलक क्रांतिकारी संत महापुरुष थे ।

लगभग ४० वर्ष पूर्व बुंदेलखण्ड भ्रमण के समय उनकी सानिध्य का सागर एवं इटारसी (म० प्र०) के वर्षायोग (चातुर्मास) के समय, हमारे लिए धार्मिक लाभ लेने और अपनी बात उन तक पहुँचाने एवं करने का भी सुअवसर प्राप्त हुआ जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार भी किया ।

श्रद्धेय ब्रह्० जी जैन धर्म के गूढ़ तत्वों को जानने वाले उच्च कोटि के विद्वान थे हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं के वह ज्ञाता भी थे ।

१६वीं शताब्दी के महान जैन आध्यात्मिक संत परम गुरुवर्य्य श्रीमद् जिन तारण तरण मंडलाचार्य जी महाराज के १४ आध्यात्मिक ग्रंथों का सागर चातुर्मास के समय जब उन्होंने स्वाध्याय किया, तो वह आत्म विभोर हो गये और हम साधर्मी सामाजिक बंधुओं की

प्रबल प्रेरणा के फलस्वरूप उन्होंने १४ ग्रन्थों में से ९ ग्रन्थों की टीकायें भी की।

श्री माला रोहण, श्री पंडित पूजा, श्री कमल बत्तीसी, श्री श्रावकाचार, श्री ज्ञान-समुच्च सार, श्री उपदेश शुद्धसार, श्री सिद्ध स्वभाव, श्री शून्य स्वभाव, श्री त्रिभंगीसार, श्री ममल पाहुड़, श्री खाति का विशेष, श्री छद्मस्तवाणी, श्री नाममाला तथा श्री चौबीस ठाना ग्रन्थों में से निम्नलिखित ९ ग्रन्थों की टीकायें की श्री माला रोहण, श्री पंडित पूजा, श्री कमल बत्तीसी, श्री श्रावकाचार श्री ज्ञान समुच्च सार, श्री उपदेश शुद्धसार, श्री त्रिभंगी सार, श्री चौबीस ठाना तथा श्री ममल पाहुड़ जी ग्रन्थ (तीन भागों में) जिनका जन साधारण की भाषा हिन्दी में भाषानुवाद कर ग्रन्थ रचनाकार श्रद्धेय पूज्य पाद श्री जिन तारण तरण स्वामी के आध्यात्मिक मर्म को स्पष्ट करके उन्होंने न केवल तारण समाज को ही उपकृत किया है, बल्कि संपूर्ण जैन समाज का आध्यात्म जगत में महान उपकार किया है। क्योंकि यह सभी ग्रन्थ संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश मिली जुली भाषा में होने से जन साधारण को उनका समझना बड़ा ही कठिन था, किन्तु श्रद्धेय पूज्य ब्रह्मचारी जी ने अपनी लेखनी से एक संत की अटपटी भाषा शैली की रचनाओं को भी सर्वसुलभ्य एवं सर्वप्रिय सरल भाषा में निरूपित कर दिया है।

वास्तव में श्रद्धेय पूज्य ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी जैन धर्म के महान क्रांतिकारी, युगदृष्टा महापुरुष थे, उन्होंने ज्ञान के क्षेत्र में आगे आकर पूर्वाचार्यो का अनुसरण कर सम्यग् दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र की त्रिवेणी बहाकर भव्यात्माओं को मुक्त होने के लिए जैनागम का सरल मार्ग प्रशस्त कर सम्पूर्ण जैन समाज का महान उपकार किया है। यह वस्तुतः सत्य है कि "महान विभूतियां महानता का लक्ष्य लेकर ही अवतरित होती हैं"।

धन्य हैं वे सन्त, जिनकी साधना से जगत को कल्याण का मार्ग मिलता है, जिनके अनुभव से ज्ञान और जीवन से प्रकाश

मिलता है जिन्होंने मानवता के विकास के लिए अपने आपको न्यौछावर कर दिया, वे परोपकारी हैं, स्मरणीय हैं, ।

उनकी पावन-पुनीत चिर स्मृति में हमारी समाज के कर्णधारों ने जो शीतल जन्म-शताब्दी समारोह एवं समापन-समारोह जिस शालीनता एवं निष्ठा और उत्साह पूर्वक आयोजित किये थे वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं ।

अन्त में हम इस आध्यात्मिक विभूति के श्रद्धावनत होकर अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हैं- इन शुभ संकल्पों के साथ कि इस तरह की महान विभूतियां हमारे देश में सदैव अवतरित होती रहें, जिससे कि धर्म एवं संस्कृति की रक्षा हो और देश एवं समाज का कल्याण हो ।

श्रद्धावनत् :-

भगवानदास जैन

सागर म० प्र०

H C. GOSWAMI, I.I.C.S., Asstt, Commr. Gauhati (8-4-1920)

He (Br Sital Prasadji) kept the whole house spell-bound for nearly two hours, and it was a real treat to listen to his lucid exposition of the seven cardinal principles of Jainism. I am sure his illuminating lecture has been able to remove existirg misconceptions about the Jain Theology from the views of my Hindu brethren.

Solomon D. Aaron, Chairman- Indian Association Phagli- Simla (21-5-1922)

We were glad to notice that your lecture on 'self-advance--ment, contained nothing of sectarian or political prejudices and was a most philosophical discourse designed to uplift humanity at large. My Association would be obliged if you would deliver another illuminating lecture to the ladies of the place on, 'Stri Dharma'

C.S. MILLAN I.C.S.

Like Lord Bacon, the lecturer (Br. Sital Prasadji) has taken all knowledge to be his province, and by his quotations from Plato and Aristotle, from Descartes and Sir Oliver Lodge, he has shown that he has traversed the whole range of philosophical enquiry from the earliest to the most modern period... The great name of Mahavir will in future ever be honoured by me. Mahavir seems to have discovered long before Descartes the fundamental truth "Cogita ergo sum" It hink,therefore I am. This is the foundation of the European theory of intellectual idealism which has been expounded more fully by kant and Hegel.

Bharat Ratna Dr. Bhagwan Das, eminent Philosopher

I had the pleesure of knowing Shri Sital Prasadji Brahamchari. and therefore I have the sorrow of knowing that I shall not see him any more. He was a very good, kind, gentle; saintly soul, always intent on spreading peace all around, disliking and shrinking from the fanaticisms and bigotrios of the quarrelsome sectarians

who take pleasure in emphasing insistently and aggressively their differences from other sectarians, and feed their own egoism under cover of devout orthodoxy.

Dr. B.C. Law

It was in 1921 when I met the learned Jain Shital Prasadji who was kind enough to pay me a visit at my cottage He was so simple in his habit and so amiable in his disposition. He was so well posted in Jainism and especially Jain Philosophy. He always took a comparative view of the subject in which he was interested. He was successful in explaining many knotty points of Jain-ism with special reference to Buddhism. He was reasonable in his estimation of the value of the subject of his choice. Undoubtedly he had many rare qualities in him which made him a great Jain and a devout Brahamachari.

Dr: Hafiz Saiyyad

It was in 1938 when I met Br. Shital Prasad first, at the All-faiths conference in Indore where he made several speeches which made deep impressions on my mind. His clear exposition of Jain Philosophy, his admirable command over the intricaties of Jain logic, his ideal life as a devoted Jain scholar, are things which we can never forget. He was one of those few Jaina scholars in India who entered into the spirit of Jaina system of thought and lived it in everyday life. Jaina philosophy is so deep, so subtle. so analytic that our ordinary untrained mind cannot easily grasp it. Swami Shital Prasadji did his level best to popularise it. He imbibed in him the true missionary spirit. He would spare no time and no pains in expounding and in inculcating it to any speeker of truth whom he happened to know. He would spend hours together in bringing home to a doubting mind the logicality and soundness of his point of view if he was convinced that his hearer was a genuine lover of divine wisdom. I had the good

fortune of meeting him in Allahabad several times and presiding over some of his lectures I never found him dogmatic in any of his assertions. His statements were always supported by sound and logical arguments This is what apealed to me most in his method of approach to any enquiry. He had a broad vision and cathelic outlook and was ever ready to share his knowledge with his fellowbeings.

Dr. A. N. UPADHYE

The late lamented Br. Shital Prasadji's name deserves to be remembered with respect by all students of Jainism and Jaina literature. It was his mission of life not only to practise principles of Jainism but also to propound them to the modern world. His zeal for studies in Jainism was remarkable, sincere and usually contagious He always encouraged others to carry on studies in Jainism, and he extended to them all possible help. It was a noteworthy trait of Brahmachariji that he had due regard even for those from whom he differed, He was great enough to understand differences. His spirit of self—sacrifice, sincerity of purpose and unflinching devotion to the study of Jainism and Jaina literature, are exemplary virtues which we should all try to follow.

Dr. BENI PRASAD

Brahmachariji was not only a scholar but also a force in social reforem and uplift He devoted all his gifts to the service of the cause in which he believed and the principles which he held. His memory will always be held in high esteem by all who had the privilege of his acquaintance.

SIR SRIRAM NEW DELHI

(I pay) homage to the great Jain Savant, the late Sri Brahmachari Shital Prasadji, (noted for) selfess devoted service to the lofty ideals which always inspired him. Swamiji put into practice with remarkable success the great precept of Jainism that Right observation leads to Right knowledge and Right Knowledge to Right Action and that Right Action leads to true and lasting happiness

K. B. JAINARAJA HEGGEDE

I knew Brahmachariji since my student days at Benaras. The Syadvada Mahavidyalaya owes a great deal to his efforts. He a great social reformer but he was neither aggressive nor offensive like many of that class and his benevolent activities have laid a path for many others to follow. In his social activities he met with good amount of opposition, but his perseverance, patience and honesty of purpose endeared him even to his enemies. His simple needs and his austere living are examples to all public workers. He lived to preserve the Jains and their religion during the surge of materialism. The community wants more saviours of that type.

L. JAGAT PRASAD C. I. E.

I met Brahmachariji for the first time in Bombay, when he was a plain youngman with no pretensions to scholarship or holiness, but filled with an earnest desire to devote his life to the service of the Jaina society and religion. He had been attracted to Bombay by the personality of the late Seth Manakchand whose practical work I think he inspired to a large extent. (Later) my interest in him was aroused mainly on reading his commentary on the Samayasra of Kunda-Kunda Acharya.

This book resolved most of the doubts and difficulties I had felt about the Jaina doctrine, and I began to look upon Brahmachariji as my guru in spirit. He stands high as a scholar of course, but his writings have a deeper appeal than that of a mere scholarship It is the appeal of a man who has had a glimpse of reality, an anubhavi. A holyman in the best sense of the word, he was also deeply human, and full of sympathy for weaker vessels. On one occasion when he expressed satisfaction at my interest in the study of Jainism, I began to talk of my faults, and he stopped me saying, "Who among us is free from faults ? Do you consider me free from faults, ? No, but when a man

recognised his faults, he has taken the biggest step towards ove-coming them." His interest in social reform arose from this sympathy for frail humanity.

B. LAL CHAND ADVOCATE

Many know, but few realise the magnitude, the intensity, the variety, the continuity and the real worth and utility of Pujya Brahmachari Shital Prasadji's lifelong work. He was a true friend of the poor and the ignorant and an ardent admirer of the good and the honest. I never saw a man having greater compassion for the afflicted than him. Having had the privilege of sitting at his feet for quite a long period of my life. I can safely say that only few are blessed with a noble, kind and soft heart like his. A truly brave and pure soul, he was impatient to remove the inequities of our social and religious system He had a burning desire to propagate Jainism and to carry the message of Shri Mahavira to every nook and corner throughout the world and to every being however low placed and depressed he my be.



दो अभिनन्दन पत्र

पूज्य ब्रह्मचारी जी अभिनन्दन पत्रों आदि से बहुत बचते थे फिर भी अनेक स्थानों में उनके अभिनन्दन किये गये। नीचे दो उपलब्ध अभिनन्दन पत्र बा० अजितप्रसाद जी की पुस्तक "ब्रह्मचारी सीतल" से उद्धृत किये जाते हैं क्योंकि उनसे ब्रह्मचारी जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

१– तारण जैन समाज, इटारसी द्वारा २०-१०-३३ को समर्पित श्रद्धेय गुरुवर्य,

जब से आपका इटारसी में आगमन हुआ तभी से इटारसी की जैन तथा अजैन जनता आपसे आत्मज्ञान पूर्ण उपदेशामृत को पान कर रही है, नित्य प्रति के उपदेशों द्वारा आपने केवल जैन समाज की ही पिपासा नहीं बुझाई बल्कि आप अपने सार्वजनिक साप्ताहिक भाषणों द्वारा अजैन भाईयों की श्रद्धा के पात्र भी बन गए हैं। आप वास्तव में अज्ञान और मोह के अन्धकार में डूबे हुए प्राणियों के "धर्म-दिवाकर" हैं।

गुरुवर्य,

आपने केवल उच्चकोटि के सरल समाचार पत्रों और गद्य साहित्य का ही भंडार नहीं भरा वरन् देश भर की धार्मिक सस्थाओं को प्रोत्साहन देकर ऐसे पंडित उत्पन्न होने में सहायता दी है जिन्हें जैनधर्म को संसार के धर्मों में श्रेष्ठ आसन दिलाने का श्रेय दिया जा सकता है और इसलिए आप जैनधर्म के वास्तविक आभूषण हैं।

आपने केवल भारतवर्ष में ही नहीं वरन् भारत से दूर सीलोन और बर्मा जाकर बौद्ध धर्मावलम्बियों में भी जैन धर्म का डंका बजाया है और बौद्ध भिक्षुओं को जैन धर्म का प्रेम उत्पन्न कराया।

आपने हमारी तारण समाज के भाइयों को कई दफे सेमरखेड़ी मल्हारगढ़, पधारकर व सागर में गत वर्ष वर्षाकाल में ठहरकर, व इस वर्ष यहां ठहरकर जो उपदेश का लाभ दिया है, व तारण-पथ संस्थापक मंडलाचार्य श्री जिनतारण स्वामी द्वारा रचित श्रावकाचार व ज्ञान समुच्चयसार का उत्थान करके जो उनके दिव्य उपदेशों को सरल भाषा में प्रकाश कर, हमको तत्वज्ञान का मार्ग बताया है, उसके लिए हम सदा आभारी

रहेंगे, और हमें पूर्ण आशा है कि आपके द्वारा अन्य भी तारण स्वामी रचित ग्रन्थों का सरल भाषा में प्रकाश होगा। आप दिन रात आत्म-मनन का ज्ञानाभ्यास में रत रहते हैं। आपने अपनी दिनचर्या से बता दिया है कि आप जीवन के समय का कैसा सदुपयोग करते है। यही कारण है कि जो आपने दिगम्बर जैन साहित्य में पचीस-तीस ग्रन्थों का सम्पादन करके महान उपकार किया है। आशा हैं कि आप चिरकाल जीवित रहकर धर्म का प्रचार और समाज का उद्धार करते रहेंगे।

हम हैं, आपके श्रद्धालु

तारण जैन समाज, इटारसी

२- जैन समाज, लखनऊ द्वारा ११-११-३५ को समर्पित—

प्यारे पथ प्रदर्शक।

लखनऊ नगर निवासी जैन जनता को यह वास्तविक अभिमान है कि आपका जन्म इसी लक्ष्मणपुर में कातिक बदी ८ वि० सं० १८३५ को हुआ आपके प्रपितामह जैन अग्रवाल गोयल वंश श्रीयुत रायमल्ल जी गड़गांव- दिल्ली प्रान्त से वाणिज्य करने के लिये लखनऊ आए। धन्य हैं आपके पूज्य पिता श्री मक्खनलाल जी व माता श्रीमती नारायणी देवी जिन्होंने आप जैसा नर रत्न और धर्मोद्योतक पुत्र उत्पन्न किया। आपके ज्येष्ठ भ्राता लाला सन्तूमल जी हमारे प्रतिष्ठित सहनागरिक हैं। आपने इसी नगर में प्राथमिक शिक्षा व धार्मिक संस्कार प्राप्त किये।
कलकत्ता में रहकर आपने जवाहरात का काम सीखा और जैन सिद्धांत का अध्ययन किया। वहां से आकर आप रेलवे में जिम्मेदारी का काम करते रहे।

सन १९०५ में महामारी के प्रकोप से एक ही सप्ताह में आपकी माता, भ्राता, सहधर्मिणी का देहान्त हो गया। बचपन की भावना ने तीव्र वैराग्य रूप धारण किया और २७ वर्ष की युवावस्था में ही धन की लालसा, उच्च पद के प्रलोभन, मित्रों के सत्संग और कुटुम्बी जनों के ममत्व को त्यागकर आप बम्बई चले गए और फिर ब्रह्मचारी व्रत में दीक्षित हुए।

परोपकारी पुण्यात्मा !

बंबई पहुंचकर आपने जैन कुल-भूषण दानवीर श्रीमान सेठ माणिकचन्द्र जी जौहरी जे० पी० के साथ धर्म-सेवा का कार्य आदर्श रूप में अथक परिश्रम से किया। सेठ जी की सुपुत्री श्रीमती मगनबहेन को जैनधर्म में शिक्षित करके जैन महिलारत्न बना दिया और जैन महिला मंडल का अपूर्व उपकार किया।

परम वात्सल्य गुणालंकृत महोदय !

जैन जगत से आपको बचपन ही से प्रेम रहा है। आपकी उदारता अद्वितीय है। समाज में आप ऐसे श्रावक रत्न हैं जिनको अपने नाम से संस्था स्थापित करने का प्रलोभन नहीं है। श्री स्याद्वाद महाविद्यालय काशी के आप संस्थापक सदस्य हैं और ३० साल से इस संस्था को सुरक्षित रखने में जितना परिश्रम आपने किया है शायद ही किसी और व्यक्ति ने किया हो। जितने दिगम्बर जैन होस्टेल, श्राविकाश्रम, जैन महिलाश्रम स्थापित हैं उन सबकी स्थापना में आपने मुख्य भाग लिया है और समस्त उपयुक्त भारतवर्षीय और इतर भारतीय जैन संस्थाओं को आप निरन्तर सहायता पहुँचाते रहते हैं।

समयसार सागर में गोता लगाने वाले !

जैन समाज में एक आप ही ऐसे धर्म-भूषण हो जिनका सारा समय सामायिक, स्वाध्याय, शास्त्रोपदेश,, देव-दर्शन, जिनेन्द्र पूजा, शास्त्र संपादन आदि धर्म ध्यान में व्यतीत होता है, जिनको समय का मूल्य मालूम है, जिनका जीवन घड़ी की सुई की भांति समयबद्ध नियमित है और जो प्रतिवर्ष कम से कम एक नया जैन ग्रंथ अवश्य लिखकर प्रकाशित कर देते हैं। जैन मित्र का संपादन श्रीमान पंडित गोपालदास जी बरैया के पश्चात आपने ही किया और अब भी जैनमित्र में निरन्तर स्वान्दुभव शीर्षक लेख और अन्य लेख अधिक मात्रा में आपके लिखे हुए ही रहते हैं, यद्यपि अब आपके नाम का संबंध उसके संपादन विभाग से नहीं है।

महानुभाव !

हमें इसका भी अभिमान है कि आप में प्राच्य और पाश्चात्य भाषा ज्ञान का समन्वय है। अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत, पाली, प्राकृत, हिन्दी गुजराती, मराठी व बंगाली भाषा की जानकारी से आप अखिल भारतवर्ष निवासियों, बल्कि आधुनिक ज्ञात दुनिया का उपकार कर रहे हैं। लंका (सीलोन) और ब्रह्मा (वर्मा) में काफी समय तक रहकर आपने बौद्ध भिक्षुओं से धर्म संबंधी विचार परिवर्तन भले प्रकार करके इन दोनों धर्मों की तुलनात्मक विवेचना प्रकट कर दी है।

हमारे परम मित्र और धर्मबन्धु।

पारस्परिक प्रेम मनुष्य का गुण, सामाजिक जीवन का जीवन है। आप योगी हैं, विरागी हैं, सप्तम प्रतिमाधारी हैं, किन्तु प्रेम प्रशंसासक्त नहीं है। अपनी जन्म भूमि से आपको प्रेम होना ही चाहिये। सन १९२६ में आपने यहां चातुर्मास व्यतीत करके सेन्ट्रल जैन पब्लिशिंग हाऊस और अजिताश्रम जिनालय की स्थापना कराई और आपकी अध्यक्षता में चैत्यालय का वार्षिकोत्सव आशातीत सफलता से गत ६ अक्टूबर को हुआ। इस वर्ष गत चातुर्मास में लखनऊ जैन समाज को आपके अनुग्रह से असीम सामाजिक और धार्मिक लाभ हुआ। आपने कई विशेष पूजायें व प्रभावशाली यज्ञोपवीत संस्कार कराया। प्रति सप्ताह में एक बार और कभी अधिक वार सार्वजनिक व्याख्यान देकर सदर बाजार से गनेशगंज, अमीनाबाद, डालीगंज और सआदतगंज तक लखनऊ के हर मोहल्ले में आपने जैन सिद्धांतों का प्रचार किया और धर्म का महत्व जनता पर दर्शाकर वास्तविक धर्म प्रभावना की। इतना ही नहीं, किन्तु आपने श्री महावीर स्वामी के निर्वाण दिवस के उत्सव में जैन मंदिर अहिल्यागंज से चौक के जैन मन्दिर तक श्री वीर भगवान का पवित्र झंडा बड़े समारोह के साथ ले जाकर धर्म प्रभावना का एक नया अंकुर जमाया। कहाँ तक कहा जाय, यहां की समाज के विशेष आग्रह से चातुर्मास संपूर्ण हो जाने पर भी बनारस से इन्दौर जाते समय भी सिद्धचक्र विधान पूर्ण सफलता पूर्वक आज ही समाप्त कराया है।

प्राणीमात्र के हितचिन्तक ।

आपकी अवस्था इस समय ५७ वर्ष की है पर आपके शरीर की कान्ति और स्फूर्ति बराबर बढ़ती ही जाती है । आपका हृदय महर्षियों की तरह विश्वप्रेम से परिपूर्ण होकर भी संसार में अपनी पवित्र वाणी द्वारा श्री वीर भगवान का शान्ति सन्देश पहुंचाकर मनुष्य मात्र का हृदय जैन धर्म की ओर आकर्षित करना चाहता है । वास्तव में आप वीतराग भावों से ओतप्रोत होते हुए भी युवक हृदय रखते हैं । हमारी सबकी आन्तरिक भावना है कि आप दीर्घायु हों और चिरकाल तक आपके द्वारा जैन जाति, भारत और संसार का हित साधन होता रहे, और रत्नत्रय की साधना में आपकी लगन व दृढ़ता उत्तरोत्तर बढ़ती जाये ।

निःस्वार्थ समाजसेवी ।

इस समय जब आप हमसे विदा ले रहे हैं हमारा हृदय कृतज्ञता-वेश से भरा आता है, संतोष इस बात का है कि आपने दयाभाव से दिसम्बर में दो ढाई महीने तक तीर्थ यात्रा में हमारी पथ प्रदर्शिता का आश्वासन दिया है । अतः अब मौनस्थ होते हैं । कहने को तो बहुत था, हमने जो कुछ कहा, थोड़ा कहा ।

आपके गुणानुवाद की हम में शक्ति ही नहीं ।

हम हैं आपके चिरकृतज्ञ
लखनऊ जैन समाज के समस्त सदस्य



कवितांजलि

पहरेदार ब्रह्मचारी जी को शत्—शत् प्रणाम

पतनोन्मुख समाज का था, किन्चित न किसी को ध्यान,
नुक्ता "मरण-भोज" द्वारा, विधवायें थीं हैरान,
जागृति के अभाव में, बढ़ता जाता था अज्ञान,
जीवनदाता बने, सुधारक, अमृत-मय व्याख्यान,
जीते जी समाज सेवा से लिया नहीं विश्राम।
ऐसे विज्ञ ब्रह्मचारी जी को बारम्बार प्रणाम॥

रहा आत्म चिन्तन तक सीमित, साधु संत समुदाय,
सामाजिक विकास में, रहता था समाज निरूपाय,
नग्न नृत्य करता था, सरपंचों का मान कषाय,
गणना घटती जाती थी, था अस्त व्यस्त समुदाय,
कुप्रथा मुक्त समाज आज उनके श्रम का परिणाम।
ऐसे पूज्य ब्रह्मचारी जी को बारम्बार प्रणाम॥

छाया था सारे समाज में, अँधकार पतझार,
अबलाओं, निराश्रितों में, व्यापक था हाहाकार,
प्रकट नहीं कर सकता था, कोई स्वतंत्र उद्गार
पोंगापंथी पंथ को दी, उस समय स्वयं ललकार,
डरे नहीं किंचित विरोध से, किया सत्य-संग्राम।
ऐसे विज्ञ ब्रह्मचारी जी को बारम्बार प्रणाम॥

रचा रहे थे पगड़ी धारी, मुखियागण पाखण्ड,
नष्ट कर रही थी समाज को गृह सत्ता उद्दण्ड,
कोई मुख खोले तो मिलता, वहिष्कार का दंड,
इतने घोर तिमिर में चमका, यह "शीतल" मार्तण्ड,
किया समाजोत्थान हेतु, अपने सुख को नीलाम।
ऐसे विज्ञ ब्रह्मचारी जी को शतशत बार प्रणाम॥

—कल्याणकुमार जैन 'शशि'

बनें आप ही के समान हम

भारत की पवित्र भूमि पर हुआ पूज्य अवतार तुम्हारा,
बिश्वासियों पर बिखरा था शांति प्रदायक प्यार तुम्हारा,
कर न सके हम यद्यपि कुछ भी सेवा या सत्कार तुम्हारा,
किन्तु न फिर भी भूल सकेंगे युग–युग तक उपकार तुम्हारा।

जीवन के मिथ्यान्धकार में सूर्य किरण बनकर तुम आए,
नव-प्रभात की उस वेला में मानस-कुँज सकल हर्षाए,
तुमने जग हित अल्प आयु में दुरस्त ब्रह्मचर्य व्रत धारा,
गृह कुटुम्ब का किंचित भी था मोह आपने नहीं विचारा।

मोहमयी कुवासनाओं को तुमने पूज्य निकाल दिया था,
निज शरीर को कठिन परीक्षा में निर्भय हो डाल दिया था,
ज्ञान सुधा के मधुर श्रोत की तुमने मंदाकिनी वहाई,
हां प्रमाद की घोर नींद से तुमने सोनी जाति जगाई।

तुमसे ही इस जैन जाति ने यह प्रशस्त गौरव था पाया,
तुमने ही तो जैन जाति का झंडा आगे आन उठाया,
तुमसे ही थी "धर्म दिवाकर" प्राची में गौरव की लाली,
अलंकार से हीन जाति थी तुम ही से आभूषण वाली।

देश देश में घूम--घूम कर, तुमने वीर संदेश सुनाया,
बन्धु भाव का दिव्य ज्ञान दे प्रेमामृत का पान कराया,
यद्यपि था प्रतिकूल स्वास्थ्य पर, व्यस्त कार्य में रहे निरन्तर,
ज्यों-ज्यों कठिन परीक्षा होती त्यों-त्यों होते जाते दृढ़तर।

तन कोमल जर्जर शरीर पर क्रूर कर्म खुल खेल रहे थे,
व्यथा व्याधि थी महाकठिन तुम फिर भी निर्भय झेल रहे थे,
मन्दभाव से कष्ट सहन करने में रहे समर्थ सर्वदा,
कुटिल काल के शान्ति बिना शक रहे आक्रमण व्यर्थ सर्वदा।

धैर्य देख तब धन्य ध्वनि मुख से निकल स्वयं जाती थी,
धर्मध्यान की पूर्ण महत्ता स्वतः सामने दर्शाती थी,
किन्तु धन्य के ही नारों से उऋण नहीं हम हो पायेंगे,
होंगे उऋण चरण चिन्हों पर जब हम सब आगे आयेंगे।

हे कवि! मैं तेरी प्रतिभा का तुच्छ दास बनकर आया हूं।
श्रद्धा से हृदयोद्गार के फूल गूँथकर मैं लाया हूं,
कलाहीन की यह श्रद्धान्जलि पूज्यपाद स्वीकार कीजिए,
"बनें आप ही के समान हम" हमें सुखद आशीष दीजिये ।।

-स्व० फूलचन्द 'पुष्पेन्दु' लखनऊ

सामाजिक क्रान्ति के अग्रदूत

ओ नवयुग की नई किरण ।
मानवता के प्रथम चरण ।
ओ समाज के क्रान्तिदूत,
जन-जन करता है अभिनन्दन ।।

अँधियारी काली रातों में, दीपक जल हरता अँधियारा
बुझते-बुझते दे जाता है, जग को सूरज का उजियारा
तुमने दिया उजाला जग को, जीवन का पाथेय बन गया
आदर्शों की राह बताई, सत्य मार्ग ही ध्येय बन गया ।

राष्ट्र, समाज, धर्म की सेवा में रत था सारा जीवन ।।

ज्ञान तुम्हारा ऐसा, जिससे लज्जित सागर की गहराई
गौरव इतना ऊंचा नतमस्तक थी हिमगिरि की ऊंचाई
लघु काया में थे विराट तुम, एक बिन्दु में सिन्धु प्रबल
ओ जिनवाणी के व्याख्याता, तात्त्विक रचनाकार सबल ।

धरती पर अवतरण तुम्हारा, नवयुग का मंगलाचरण ।।

मानो पीड़ित समाज का युग का सपना साकार हुआ
महावीर की कल्याणी वाणी का फिर अवतार हुआ
आडम्बर के खंडहर पर कर पदप्रहार कर दिया ध्वस्त
सामाजिक कुरीति के ताने बाने को कर अस्त व्यस्त ।

धार्मिक गुरू थे, पर समाज की सेवा में खोया अपना तनमन ।।

—शेखर जैन

ब्रह्मचारी हे शीतल पावन



जीवन की परिभाषा थे तुम,
मानवता की आशा थे तुम,
बने सदा पतझर में सावन,
ब्रह्मचारी हे शीतल पावन !

धर्मकलश जब सिसक रहे थे,
मुश्किल था दर्शन का जीना,
बाधाओं से टकराये थे तुम,
उस समय खोल अपना सीना !

धर्मतत्व की परिभाषा थे तुम,
जन-जन की मंगल आशा थे तुम,
कर्म तुम्हारे थे मन-भावन,
ब्रह्मचारी हे शीतल पावन !

राष्ट्र-प्रेम नस-नस में भरकर,
आजादी की ध्वजा उठाई,
कण-कण जिससे धधक उठा था,
ऐसी पावन आग जगाई !

देश-प्रेम की आशा थे तुम,
बलिदानों की भाषा थे तुम,
राष्ट्र-प्रेम दे गए सुहावन,
ब्रह्मचारी हे शीतल पावन !

अमृत थी लेखनी तुम्हारी,
जिसने दिव्य ज्ञान बिखराया,
जैन धर्म का सा तत्व सब,
शब्दों में तुमने समझाया ।

सत्य प्रेम की भाषा थे तुम,
जन-मन की परिभाषा थे तुम,
काव्य-सूर्य तुम थे मनभावन,
ब्रह्मचारी हे शीतल पावन !

-डा॰ योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण'



नहीं आप शीतलप्रसाद जी, इन आंखों के गोचर,

हम सबसे संबंध छोड़कर, बसे स्वर्ग में जाकर,

फिर भी उनके कार्य लोक में, अचल रहेंगे तब तक,

सूर्य चन्द्र इत्यादि गगन में, फिरा करेंगे जब तक ।

-कविवर गुणभद्र जैन

ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी

वो थे महान कल्याणी ज्ञानी, जिनकी अब तक अमर कहानी ।
है बिछुड़ने का शोक सभी को, संसार चक्र है मानो ज्ञानी ।।
कोई न भूल सकता है उपकार तेरे, अगणित कार्य समाज हित में किए।
अज्ञान अंध मानवों को सुखद मार्ग सदा को दिखा दिए ।।

वृतांत जैन जनता हित में छपाके,
त्यागी अनेक तुमने शिव मार्ग में लगा दिए,
जो भूले तथा भटकते निज मार्ग पाये,
उनको अपने लेखों द्वारा ज्ञानी बनाये।
लेते न भेंट कुछ भी परमार्थ के थे सेवी,
जो डूबते थे उन्हें पार लगाए।

श्रद्धा है मन में मेरी, सन्मार्ग दर्शन सबको कराए ।
सामाजिक कुरीतियों को, तुमने ही दूर भगाया ।।
नवयुवकों को हंस-हंस कर तुमने निज गले लगाया।
शिक्षा प्रचार करके अज्ञानता को नशाया ।
जाने कितने सोनेवालों को धर्म ध्वनि सुना के जगाया।
दस्साओं को पूजन अधिकार तुमने दिलाया ।
क्रूर रूढ़ियों को तुमने, जड़ से मुकाबला कर मिटाया।
पथ दर्शक बन सदा सत्य का, मार्ग हमको सत्य का दर्शाया।
ऊंच-नीच का भेदभाव, अंतर से दूर हटाया ।।

जब तक नभ में रवि शशि तारे, वसुधा पर जिनवाणी ।
जन जन में गूंजे तेरी सुमधुर सुधारक अमृत वाणी ।।
ब्रह्मचारी जी थे महान ज्ञानी कल्याणी ।।

–श्री मिश्रीलाल पाटनी

श्रद्धेय पूज्य ब्र० शीतलप्रसाद जी की कहानी

(श्री राधेलाल समैया 'तन्मय')

युग पुरुष ब्रह्मचारी शीतलप्रसाद जी की सुनिये कहानी ।
जैन धर्म भूषण, जैन धर्म-दिवाकर का परिचय मेरी जबानी ।। टेक ।।
लखनऊ नगर में उनका जन्म हुआ था ।
सन् अठारह सौ अठहत्तर में उन्होंने जन्म लिया था ।।
बचपन से ही बालक निर्भय अरु निडर था ।
अग्रवाल-वैष्णव जाति में उनका विवाह हुआ था ।।
सत्ताईस वर्ष बचपन से जवानी तक है समय बितानी ।। १ ।।
माता-पिता-भाई के वियोग से भये तत्व ज्ञानी ।
पत्नी भी अल्पकाल में स्वर्गवास धाम सिधारीं ।।
रेलवे की नौकरी से तब उन्होंने मोह हटानी ।
जैन धर्म से हुई प्रीत बने ब्रह्मचर्य व्रत धारी ।।
लोगों ने बहुत समझाया लघु आयु कैसे जीवन बितानी ।। २ ।।
गृहवास छोड़ गये बम्बई जैन मंदिर में प्रवेश पानी ।
मानकचंद पानाचंद सेठ से हुई भेंट तब कही कहानी ।।
गजट 'जैन मित्र' और 'वीर' के संपादक बने, समाज सेवा की ठानी ।
समाज-सुधार के अग्रगामी नेता बने तब से ये प्रानी ।।
समाज की दुर्दशा देख आंखों से बहता था पानी ।।३।।
अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन परिषद को उन्होंने जनम दिया था।
समकालीन सुधारक बैरिस्टर चम्पतराय से सम्पर्क बना था ।।
जज जुगमंदर, सूरजभान वकील, जमनाप्रसाद का सहयोग लिया ।
अजितप्रसाद वकील, राजेन्द्रप्रसाद, रतनलाल ने काम किया था ।।
देश में अनेक सुधारकों ने समाज में कुरीतियां मिटाने को हलचल मचानी ।४।
बर्मा, लंका आदि देशों में उनका पर्यटन हुआ था ।
जैन धर्म के प्रचार अरु साहित्य उद्धार में योग दिया था ।।
देश भर में प्रचार हो उनका एक मात्र लक्ष्य यही था ।
सारे ही तीर्थ स्थानों में उनका भ्रमण हुआ था ।।
सेठ मानकचंद जे० पी० के गुरु बने वे ब्रह्मज्ञानी ।।५।।
अनेकों शास्त्रों के वे टीकाकार और लेखक बने आसानी ।
समयसार, नियमसार, प्रवचनसार में कथी अध्यात्मवानी ।।

संत तारण तरण के ग्रन्थों की टीका कर, दई निसानी ।
तीन बत्तीसी, श्रावकाचार, उपदेश शुद्धसार सद्ग्रंथ बखानी ।।
ममल पाहुड़, न्यान समुच्चयसार, त्रिभंगीसार, चौबीस ठाणा जानी ।।६।।
ब्रह्मचारी जी जब ही ग्रन्थ लिखते होते थे गद्गद् प्रानी ।
सोते-जागते सदा चिंतन में रहते बोलते थे अचूक बानी ।।
ग्रन्थ क्या हैं भगवन् कुंद-कुंद के समन्वय की भरी है अध्यात्मवाणी ।
श्रद्धेय गुरुवर्य तारण के ग्रंथों में पा रहे हैं हम जिनवानी ।।
परोक्ष वंदना करके गुरू की मैं उनके गुणों के प्रति हो रहा श्रद्धानी ।।७।।
सत्यवक्ता, सदाचारी, सद्व्यवहारी, साधना, सयम के धारी थे ।
समाज-सुधारक संत, समता के धारी, योगाभ्यासी थे ।।
सरल-सौम्य-मूरत, देशव्रत पालक श्री ब्रह्मचारी जी थे ।
दयालु-दाता, सेवाभावी, सद्विचारी, शिरोमणि साधु थे ।।
सुख-सागर भजनावली के कई भागों में लिखी अध्यात्मवानी ।।८।।
जैन जाति के एकीकरण के लिये उन्होंने प्रयत्न किया था ।
बाल विवाह, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह का विरोध किया था ।।
मरण भोज, दहेज प्रथा को मिटाने का दृढ़ संकल्प लिया था ।
गर्भपात, भ्रूणहत्या को रोकने हेतु विधवा विवाह का समर्थन किया था ।।
पाखण्डता, मिथ्यात्व छोड़ने को लोगों को सीख सिखानी ।।९।।
विशाल-विद्वता, गंभीरता, धार्मिकता से ओतप्रोत थे ।
अध्ययन-मनन-चिंतन में सदा लवलीन व्यस्त थे ।।
सब मिलाकर 'सततर ग्रंथों के लेखक बने थे ।
हर ग्राम, नगर-नगर में भ्रमण कर मार्ग-दर्शक बने थे ।।
जैन-साहित्य का आपने अंग्रेजी भाषा में भी अनुवाद करानी ।।१०।।
तारण स्वामी के ग्रन्थों की है भाषा अटपटी कही ब्रह्मज्ञानी ।
जल में समाधि देने की लोगों को सीख है सिखानी ।।
ब्रह्मचारी जी के रहस्योद्घाटन से उन्होंने पढ़ने की ठानी ।
पंडित फूलचद्र शास्त्री कानजी स्वामी कह रहे हैं निरगुणी है वानी ।।
अनेक प्रवचनों में काम आ रही है समाज में छदमस्तवाणी ।।११।।
अपमान, तिरस्कार से नहीं कभी भयभीत हुए थे ।।
कर्त्तव्य मार्ग पर चलने में नहीं कभी संकुचित हुए थे ।
साधर्मियों की सेवा, सहानुभूति में सदा दत्तचित्त हुए थे ।
ऐसे थे महान् व्यक्ति, लेखक, साहित्यिक, कवि हुये थे ।।
समाज सेवकों को सदा मानापमान की वेदना पड़ती है उठानी ।।१२।।

सेठ मानकचंद जे० पी० का जीवन चरित्र लिखा था ।
महिलारत्न मगनबाई का जीवन परिचय लिखा था ।।
सागर के चौमासे में श्रावकाचार ग्रन्थ की टीका लिखी थी : ।
इटारसी के चौमासे में न्यान समुच्चय सार ग्रंथ की टीका लिखी थी ।।
ब्रह्मचारी जी निश्चय-व्यवहार के थे दृढ़ श्रद्धानी ।। १३ ।।
कितने प्रभावशाली, प्रतिभावान समयोचित वक्ता थे ।
उनके समर्थक, पूजक भी अनेकों श्रद्धालु भक्त जन थे ।।
भट्टारकों की गद्दी के ब्रह्मचारी जी प्रबल विरोधी थे ।
बीसवीं सदी में जैन जाति में सुधारक संत थे ।।
रेल, मोटर यानायात के लिये उन्होंने साधन बनानी ।।१४।।
कितने ही सुखद कार्य उन्होंने इस जग में किये थे ।
जग में अपनी करणी-कृतियों से नाम अमर किये थे ।।
ऐसे वे युग पुरुष, धर्म प्रति पालक, समाज सेवक हुए थे ।
देश में अनेकों पाठशालायें खुलवाकर अनेक विद्वान बनानी ।।१५।।
अंतिम समय में उन्हें कर्मों के वश, कम्प रोग हुआ था ।
हाथों पैरों में था कम्पन बोलने में भी कष्ट हो रहा था ।।
पत्रों में दिन-प्रति समाचार निकलते वायु कंप रोग था ।
एक माह पूर्व से ही अजिताश्रम में उनका निवास था ।।
पैर की हड्डी टूटने से हुये अशक्त जब, तब पलस्तर है चढ़ानी ।।१६।।
कुछ पुण्य उदय से मैं लखनऊ सेवाहित पहुँचा भाई ।
तारण-तरण समाज का सेवक बना उनको सुखदाई ।।
दो-चार दिन में मूत्र से पलस्तर भींगा जब भाई ।
काटने हेतु उसे तब अस्पताल में सबने भरती कराई ।।
काटा गया पलस्तर तब घाव दिखा उसमें दुखदानी । ।।१७।।
छह इंच चौड़ा, छह इंच लंबा, छह इंच गहरा बना घाव था ।
-दिन प्रति कटता, पीब भरता देखकर सबका बेहाल था ।।
पर धन्य है उन साधु को जिन्हें केवल कर्मों का जाल था ।
आह भी नहीं करते थे परिषह सहन करते मस्तक विशाल था ।।
डाक्टरों ने दर्द की दवा लेने हेतु कहा पर उनने बात नहीं मानी ।।१८।।
संतरा, मुसम्मी का रस अरु दूध मात्र ही उनका आहार था ।
धर्मों के पाठ सुनाता रहे कोई उनका यह विचार था ।।
इक्कीस दिन बीते स्वास्थ्य में नहिं किंचित सुधार था ।
बाईसवें दिन अहियागंज धर्मशाला में जन जन बेशुमार था ।।

दस फरवरी सन् ब्यालीस बनी उनकी स्वर्ग निसानी ॥१९॥
कानपुर, लखनऊ से जैन पुरुष महिलायें चलकर आईं ।
सब ही ने मिलकर उनकी अर्थी झंडियों से सजाई ॥
गाजे बाजों से चली अर्थी नगर के बीचों बीच से जाई ।
बहुत लम्बा था जलूस, कीर्तन करते जाते थे सब भाई ॥
दो घंटे पश्चात उन्हें जैन बाग डालीगंज में पहुंचानी ॥२०॥
चंदन की लकड़ी से बनी चिता बहुत भव्य सुहानी ।
दर्शन हेतु जनता उमड़ पड़ी सबही ने अश्रु बहानी ॥
अग्नि प्रज्जवलित हुई लपटें आसमान तक छानी ।
देखते ही बनता था वहां चित्र खिंचे मनमानी ॥
धीर-वीर साधु थे, निश्चल, सहनशील, सम्यग्ज्ञानी ॥२१॥
यह असार संसार छोड़ ब्रह्मचारी जी स्वर्ग सिधारे ।
पंडित महेन्द्रकुमार अरु कापड़िया जी भी उन्हें देखने पधारे ॥
संतों का जीवन ही निश्वार्थमय होता है प्यारे ।
जन-जन के कल्याण हेतु श्री जी इस जग में पधारे ॥
व्रत-नियम, सामायिक-क्रियायें मानव को होती सुखदानी ॥२२॥
उनके जीवन से कुछ सीख लेना चाहिये हमको भाई ।
संसार में आकरके 'स्व-पर' कल्याण करते रहना चाहिये भाई ॥
कर्मों का चक्कर सबको ही भोगना पड़ता है भाई ।
क्या साधु-संत, दीन, वैभव भोगी, विलासी, दानी हो भाई ॥
पुरुषार्थ अरु प्रयत्न से स्वर्ग मोक्ष पाता है प्राणी ॥२३॥
इक बार सन पच्चीस में वे सागर पधारे थे भाई ।
विधवा विवाह समर्थक होने से लोगों ने नहिं प्रीत दिखाई ॥
राईसे बजाज सागर ने आदर सहित अपने यहां ठहराई ।
श्रद्धा-भक्ति विनय से सत्कार कर विद्वान के प्रति प्रीत दिखाई ॥
तब से ही उन्हें मथुराप्रसाद आदि में धर्म की रुचि दिखानी ॥२४॥
तारण स्वामी की समाधि निसई जी श्री जी दो बार पधारे ।
भव्य स्मारक देखकर ब्रह्मचारी जी गद्‌गद् हुये थे प्यारे ॥
नदी वेतवा तट पर सामायिक चबूतरा देख हर्षित हुए श्री हमारे ।
वेदी पर जिनवाणी की स्थापना से जय बोल उठे थे प्यारे ॥
जिनवाणी ही संसार में मानव उद्धार करने में समर्थ सत्यबानी ॥२५॥
लखनऊ नगर के मानवों की सहृदयता से मैं प्रसन्न था ।
अजितप्रसाद वकील का निर्विचिकित्सा अंग देखकर सन्न था ॥

'जैनमित्र', 'वीर' गजटों में उनकी शोक संवेदना का अंश था ।
सराफ साहब चौक वालों का ब्रह्मचारीजी को दूध फल पहुँचाना माने
उनका वंश था ॥
मुन्नालाल कागजी, बरातीलाल जी का है कर्त्तव्य निभानी ॥२६॥
तारण तरण समाज उनके शास्त्र उद्धार के प्रति कृतज्ञ रहेगी ।
वर्तमान में सेठ भगवानदास अरु डालचंद्र से उनकी कीर्ति बढ़ेगी ॥
शत् शत् प्रणाम करूँ स्मृति उनकी सदा हृदय में रहेगी ।
वे 'जहां' भी हों, जिस पर्याय में हों, धर्म प्रचार करें, कामना रहेगी ॥
राधेलाल को जन-जन का आशीर्वाद मिले यह भावना है मानी ॥२७॥
समस्त तारण समाज को उनके प्रति अपार श्रद्धा का भाव था ।
उनके रचे ग्रंथों को छपाने का बड़ा ही चाव था ॥
सेठ मन्नूलाल, मथुराप्रसाद का उन्हें छपाने में नाम था ।
बहुतक ग्रंथों में सागर तारण समाज का नाम था ॥
चौदह ग्रंथों में रचे श्री ने नौ ग्रंथ ही सुखदानी ॥२८॥
रेल यातायात में समय से सामायिक वे करते थे ।
ऐसे थे कर्त्तव्यशील नहिं विघ्न बाधाओं से डरते थे ॥
जैन धर्म के अनन्य भक्त, भक्ति-योग के पथ प्रदर्शक थे ।
स्याद्वाद विद्यालय बनारस के श्री संचालक थे ॥
मानवों के हितैषी, देव-शास्त्र-गुरू के थे श्रद्धानी ॥२९॥
परिवार के बंधु संतूलाल धर्म प्रतिपालक दिखाते थे ।
श्री जी अस्वस्थ्यता में मुझसे कई जगहों को पत्र लिखाते थे ॥
पत्रों में भी सब को धर्म के प्रति जागरूक रहें प्रेरणा देते थे ।
ऐसे थे विवेकी, धर्म जागरूक समाजहित की चिंता में रहते थे ॥
मोह तो हमें लेशमात्र भी उनमें नहिं दिखानी ॥३०॥
खुशालचन्द्र कंडया कई बार मेडीकल कालेज पधारे ।
सहृदयता, सहानुभूति भरे शब्द उन्होंने मेरे प्रति उचारे ॥
लखनऊ निवासियों का आग्रह था हम अभिनंदन करेंगे तुम्हारे ।
पं० महेन्द्रकुमार ने 'जैन मित्र' में लिखे कर्त्तव्य हमारे ॥
कई बार सागर आने पर मुझे सेवा का अवसर मिला सुखदानी ॥३१॥

अंतिम श्रद्धांजलि परोक्ष में उन्हें मैं करता भाई ।
देश, धर्म, जाति के लिये उन्होंने जो प्रीत दिखाई ॥
स्मारिका अटल रहेगी उनकी चिरकाल तक भाई ।
गायेंगे गुणगान उनके सदैव सब मिल करके भाई ॥

"तन्मय" को विश्वास है इतिहास में अमर रहेगी उनकी कहानी ।।३२।।
तारण स्वामी के ग्रंथों में अध्यात्मवाद की भरी हुई है वाणी ।
निश्चय अरु व्यवहार से कथनी कर मार्ग दर्शन करानी ।।
चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग, करणानुयोग का परिचय करानी ।
ब्रह्मचारी जी ने ग्रन्थों की प्रशंसा कर उनका महत्व समझानी ।।
भगवान महावीर से भगवन् कुंद-कुंद तक की भरी हुई इनमें वानी ।।३३।।
तारण समाज को तारण साहित्य के अनुवाद की बड़ी चाह थी ।
सौभाग्य से ब्रह्मचारी जी मिल गये तब चातुर्मास की सलाह थी ।।
ब्रह्मचारी जी को भी प्राचीन ग्रन्थों के उद्धार की बड़ी चाह थी ।
तारण समाज विरोधी व्यक्तिओं की नहिं उन्हें परवाह थी ।।
सन बत्तीस में मथुराप्रसाद ने श्री जी को है शास्त्र दिखानी ।।३४।।
सागर में राइसे बजाज बैशाखिया, नंनेलाल आदि पुरुष थे भाई ।
खुरई में चौधरी जी, बांदा में सेठ शिखरचंद, मुरलीधर थे भाई ।।
बासौदा, होशंगाबाद, सिरोंज, दमोह, छिंदवाड़ा सब प्रांत में रहें भाई ।
जबलपुर, सिलवानी, भोपाल, नागपुर, टिमरनी, विदिशा के सब भाई ।।
तारण सिद्धांत को पढ़ना जानते थे नहिं अर्थ समझे थे प्राणी ।।३५।।
छह संघ सम्मेलन से समाज में जागरूकता आई ।
पं० जयकुमार, ब्रह्मचारी गुलाबचंद्र ने गृह छोड़ा भेषधारा भाई ।।
वर्तमान में पाँच सौ ग्राम नगरों में हैं करीब पच्चीस हजार तारणपंथी भाई ।
ब्रह्मचारी जी के संपर्क से नौ ग्रंथ प्रकाशित हो गये भाई ।।
पांच ग्रंथ अब भी हैं जिन पर विद्वान् गण अपनी दृष्टि जमानी ।।३६।।
तारण समाज के कई बंधुओं ने तारण साहित्य का सृजन किया है।
पंडित चम्पालाल ने जिनवाणी संग्रह में ग्रन्थों का उल्लेख किया है।।
अमृतलाल 'चंचल' कवि भूषण ने पत्र में लेखन कार्य किया है ।
तीन बत्तीसी, श्रावकाचार ग्रंथ का पद्य पाठ भी लिख दिया है ।।
समाजरत्न पंडित जयकुमार ने छदमस्त वाणी का अर्थ लिख दिया है ।
ब्रह्मचारी, धर्म दिवाकर गुलाबचन्द्र ने चौदह ग्रंथों का अध्यात्मवाणी में
संकलन किया है ।।
पूज्य कानजी स्वामी ने अष्ट प्रवचनों में जिनका रहस्य प्रगट किया है ।
बिमलादेवी, चमेलीबाई, मुक्त श्री बहिन ने साहित्य पर प्रवचन किया है ।।
तारण तरण युवा परिषद शिविर लगाकर आज जन-जन में प्रचार करानी ।३८।
समाज को श्रीमंत सेठ सा० का पूर्ण रूपेण सहयोग मिला है ।
शास्त्रों को जैन-समाज में घर-घर तक पहुंचाने का सुयोग मिला है ।।

श्रीमंत सेठ डालचन्द्र जी दिगम्बर जैन परिषद के अध्यक्ष बने ।
ब्रह्मचारी जी की शताब्दी समारोह एवं समापन में योग दिया है ॥
कामना प्रभु से यही समाज-भूषण श्रीमंत सेठ सदा ही धर्म के प्रति
बने रहें श्रद्धानी ।
अंतिम ब्रह्मचारी जी का स्वस्थ्य रूप से परिचय दिया है भाई ॥३९॥
मुझे विश्वास है कलिकाल में उनका अवतार हुआ था भाई ।
जो भूल भटक मुझसे हुई हो उसे सुधार कर पढ़ें सब भाई ॥
देव-शास्त्र-गुरू के प्रति मैंने अपनी श्रद्धा, भक्ति अरु विनय दरसाई ।
"तन्मय" श्रद्धांजलि समर्पित कर यही श्री के प्रति कृतज्ञता दिखानी ॥४०॥

नोट:— सागर (म० प्र०) निवासी श्री राधेलाल समैया 'तन्मय' स्वतंत्रता संग्राम सेनानी स्व० ब्रह्मचारी जी के परम भक्त रहे हैं। उन्होंने ब्र० जी की अन्तिम रुग्णावस्था में लखनऊ में रहकर उनकी अथक सेवा-परिचर्या की थी। उपरोक्त कविता में उन्होंने ब्र० जी के प्रति अपने श्रद्धा पूर्ण उद्गार व्यक्त किये हैं— सं०